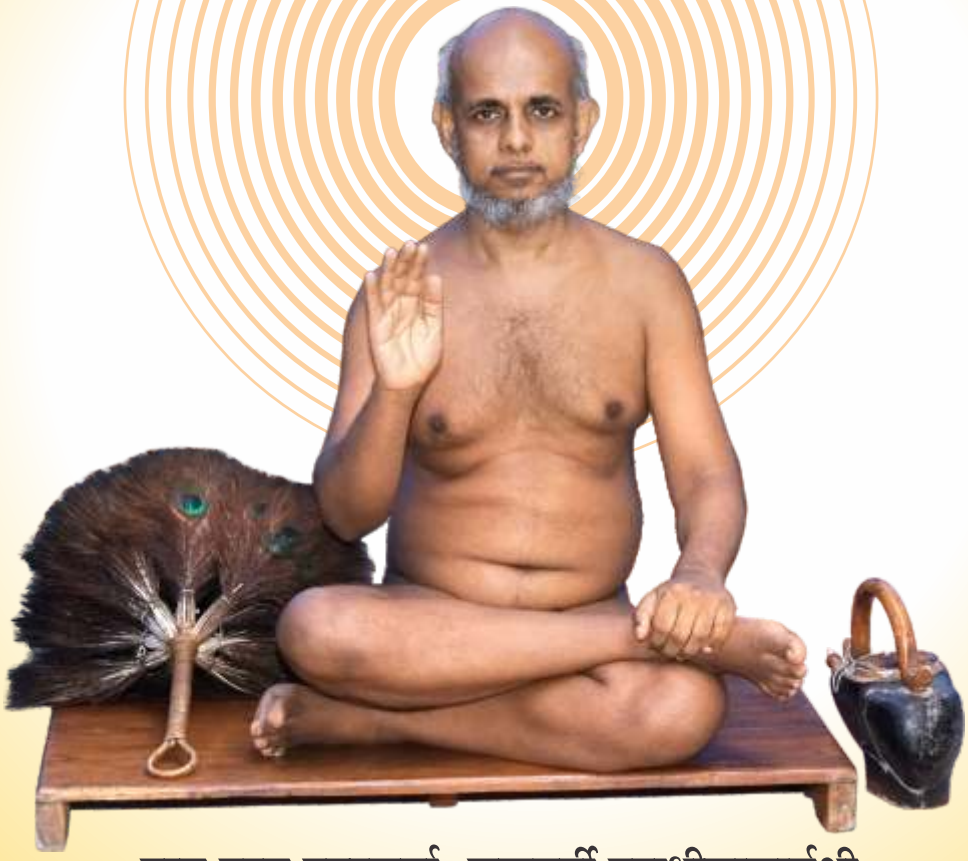

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

विशद दशलक्षणा विधान

कृतिकार :
परम पूज्य आचार्यश्री
विशदसागर जी महाराज

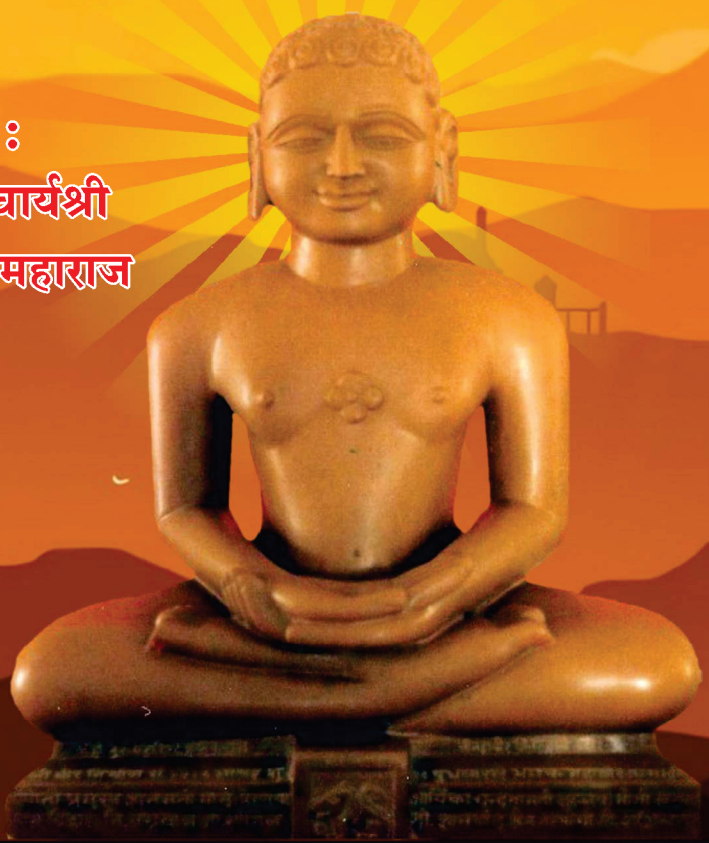

प्राप्ति स्थान :
विशद साहित्य केन्द्र श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, कुआँ वाला,
जैनपुरी रेवाड़ी (हरियाणा)

(परम्परानायक)

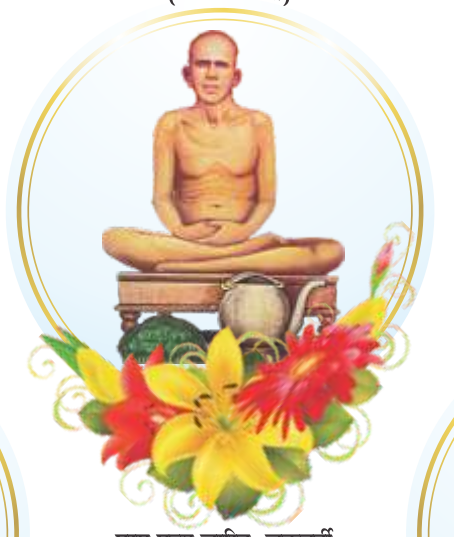

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

विशद
दशलक्षण विधान

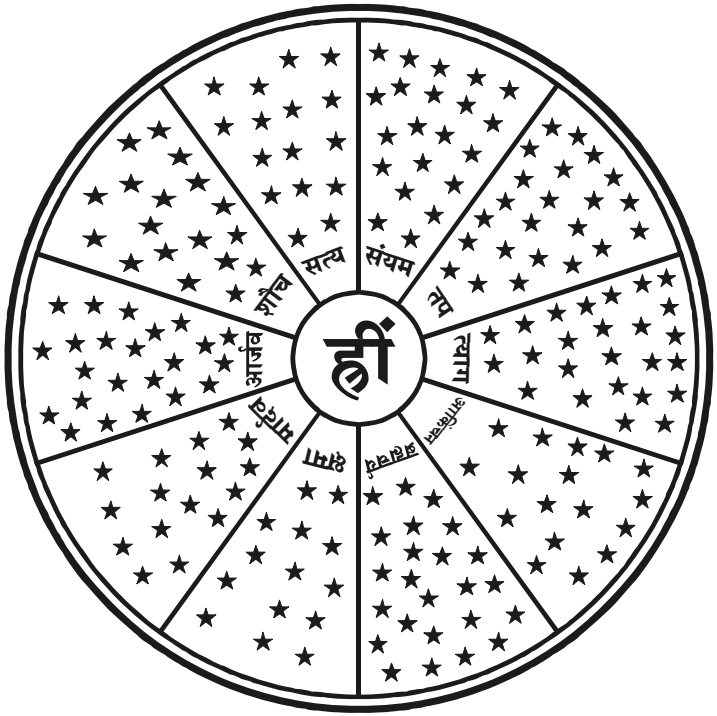

अर्घ –

1. क्षमा – 15
2. मार्दव – 16
3. आर्जव – 23
4. शौच – 18
5. सत्य – 15

अर्घ –

6. संयम – 20
7. तप – 24
8. त्याग – 24
9. आकिंचन – 16
10. ब्रह्मचर्य – 25

रचयिता : प.पू. आचार्य विशदसागरजी महाराज

कृति – **विशद दशलक्षण विधान**

कृतिकार – प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण – तृतीय 2016 ● प्रतियाँ :1000

संकलन – मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज

सहयोग – क्षुल्लक श्री 105 विदर्शसागरजी
क्षु. 105 श्री भक्ति भारती, क्षु. 105 श्री वात्सल्य भारती

संपादन – ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) आस्था दीदी, सपना दीदी

संयोजन – ब्र. सोनू दीदी, आरती दीदी मो. 9829127533

प्राप्ति स्थल – 1 जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट
मनिहारों का रास्ता, जयपुर
फोन : 0141-2319907 (घर) मो.: 9414812008

2. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार
ए-107, बुध विहार, अलवर मो.: 9414016566

3. विशद साहित्य केन्द्र - 9812502062
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा) प्रधान-09416882301

मूल्य – 51/- रु. मात्र

-: अर्थ सौजन्य :-

श्रीमती गुलाब देवी पाटनी ध.प. श्री भँवरलाल जी पाटनी की पुण्य स्मृति में
अजय कुमार पाटनी, राजेन्द्र पाटनी, महावीर पाटनी, पदम पाटनी
नया बाजार, चौमूँ (जयपुर)

_wÐH$: राजू ग्राफिक आर्ट, जयपुर ● फोन : 2313339, मो.: 9829050791

अंतस् की भावना

गृहस्थ जीवन प्राय: अशुभ परिणामों की खान है। आर्त्त–रौद्र ध्यान एवं राग–द्वेष का निरंतर चिंतन–मनन मानव मस्तिष्क में चलता रहता है। मानव चित्त अति चंचल है। कहा भी है कि – **'पारे की बूँद को पकड़ पाना कदाचित् संभव हो सकता है, किन्तु मानव चित्त की चंचलता को पकड़ना असंभव–सा है।** अत: परिणामों को स्थिर करना उसके लिए अति कठिन है। अष्ट द्रव्य के माध्यम से मन को स्थिर करने हेतु पूर्वाचार्यों ने 'द्रव्य सहित भाव पूजन का उपदेश दिया है।

जिस प्रकार मूर्ति का अवलम्बन **'तद्गुण लब्धये।'** की सूक्ति अनुसार मूर्ति के स्वरूप के अनुरूप मन में परिवर्तन लाता है उसी प्रकार द्रव्य–पूजा भी बाह्य ध्यान से चित्त हटाने के लिए गृहस्थों के लिए पावन उपकरण है।

जिनेन्द्र देव की पूजा से पूजक को निश्चित ही पुण्य का अर्जन होकर इष्ट सिद्धि होती है। पूजक को तत्क्षण ही इष्ट सिद्धि हो जावे तो भी कोई आश्चर्य की बात नहीं है। पूजा के फल को बताते हुये कहा भी है–

किं जंपिएण बहुणा तीसुवि लोएसु किं पि जं सुक्खं।
पुज्जाफलेण सव्वं पाविज्जइ णत्थि संदेहो॥

अर्थ– बहुत कहने से क्या, तीनों लोकों में जो कुछ भी सुख हैं वे सब पूजा के फल से प्राप्त होते हैं, इसमें संदेह नही है।

इस सुख के आलम्बन हेतु प. पू. आचार्यश्री ने **''दशलक्षण धर्म विधान''** की रचना कर हम सभी को कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने का सुगम मार्ग दिखाया है।

आचार्यश्री की रचना जनमानस को लाभकारी होवे और सभी को मुक्ति वधु की प्राप्ति हो इसी भावना के साथ आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज के चरणों में कोटिश: नमोस्तु–3

–ब्र. आरती दीदी

दशलक्षण व्रत विधि

भाद्रपद, माघ और चैत्र माह में शुक्ल पक्ष की पंचमी से चतुर्दशी तक वर्ष में तीन बार दशलक्षण पर्व आते हैं। इन पर्व के दिनों में यथाशक्ति व्रत, नियम, संयम पालते हुए दिन व्यतीत करना चाहिए। दशलक्षण व्रत रखने वालों को शुक्ल पक्ष की पंचमी से व्रत प्रारम्भ करने चाहिए। यह व्रत दस वर्ष तक पालन करना चाहिए। इसकी मुख्य विधि इस प्रकार है–

उत्तम विधि– दस दिनों के दस उपवास।

मध्यम विधि– पञ्चमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी, इन चारों तिथियों में उपवास और शेष छह दिनों में एकाशन।

जघन्य विधि– दस दिनों के दस एकाशन।

व्रतों में प्रतिदिन दशलक्षण की पूजा के साथ प्रतिदिन के अलग–अलग जाप भी करना चाहिए। व्रत के उद्यापन पर दशलक्षण महामण्डल विधान की रचना कर श्री जिनेन्द्र देव की महाअर्चना करनी चाहिए व यथायोग्य चारों प्रकार का दान करना चाहिए। दशलक्षण पर्व जीवन में आत्म स्वभाव की प्राप्ति कराने में विशेष कार्यकारी है।

–मुनि विशालसागर

दशलक्षण धर्म की कथा

धातकी खण्ड में मेरु के दक्षिण भाग में सीतोदा नदी के तीर पर एक नगर में राजपुत्री मृगांक लेखा, मंत्रीपुत्री कमलसेना, सेठ पुत्रियाँ – मदनरेखा और रोहिणी थी।

बसन्त ऋतु में वनक्रीड़ा को जाने पर बसन्तसेन मुनिराज के दर्शन कर संसार विच्छेद करने की जिज्ञासा की। तब मुनिराज ने दशलक्षण व्रत करने को कहा। कन्याओं ने व्रत ग्रहण कर भक्ति भाव से पालन किया, शांतभाव से मरण कर स्वर्ग में देव पद पाया वहाँ से चय कर मालव देश में उज्जयिनी नगरी के राजा स्थूलभद्र की चार रानियों से विचक्षणा, लक्ष्मीमति, सुशीला, कमलाक्षी के गर्भ से चार पुत्र उत्पन्न हुए। वह सभी उत्तम आयु प्राप्त कर राज्य करते रहे। अन्त में कोई निमित्त पाकर दीक्षा धारण की और तपश्चरण करके कर्म नाशकर शिवपुर के वासी बने जो अनन्त सिद्धों में मिलकर अनन्त सुख का भोग करने वाले विशद अजर–अमर पद के भागी बने।

दोहा– सेठ पुत्रियों ने 'विशद', दशलक्षण व्रत धार।
इस भव के सुख प्राप्त कर, खोला मुक्ती द्वार॥

दश लक्षण मण्डल विधान

स्तवन

वृषभादी चौबीस जिनेश्वर, भरत क्षेत्र में हुए महान् ।
अनन्त चतुष्टय पाने वाले, 'विशद' पुण्य के रहे निधान ॥
उत्तम क्षमा आदि धर्मों का, कथन किए जो मंगलकार ।
सुर नर मुनि सब वन्दन करते, जिनके चरणों बारम्बार ॥

दोहा:- दश लक्षण शुभ धर्म के, होते महिमावन्त ।
काल अनादि जो रहे, जिनका आदि न अन्त ॥
भव रोगों के नाश को, औषधि है मनहार ।
व्रत करके दश धर्म का, मिलता भव से पार ॥
भव सागर के पार को, नौका रहे महान् ।
भव सुख हेतु कल्पतरू, देते पद निर्वाण ॥

(गीता छन्द)

मनरूप मर्कट को विशद यह, श्रेष्ठ बन्धन जानिए ।
गज इन्द्रियों को सिंह जैसा, मोह तम रवि मानिए ॥
है स्वर्ग को सीढ़ी मनोहर, व्रत सु मंगलकार है ।
करता जगत कल्याण अपना, व्रत धरम का सार है ॥

(बेसरी)

दश लक्षण व्रत करने वाले, जग में होते लोग निराले ।
साधर्मी वह लोग कहाते, वह सम्मान सभी से पाते ॥
सुख शांति आनन्द प्रदाता, जैन धर्म है जग का त्राता ।
सुर नर महिमा जिसकी गावें, व्रत धारण करके हर्षावें ॥

दोहा:- दश प्रकार का धर्म यह, कल्पतरू दश जान ।
इच्छित फल दायक विशद, जग में रहे महान् ॥
धर्म जीव का ताज है, धर्म हमारा नाथ ।
यही भावना है मेरी , भव-भव में हो साथ ॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

उत्तम क्षमादि धर्म समुच्चय पूजा

स्थापना

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम धारी ।
तपस्त्याग आकिञ्चन धारे, ब्रह्मचर्य धर अनगारी ॥
दश धर्मों को धारण करते, कर्म निर्जरा करें मुनीश ।
विशद भाव से वन्दन करके, झुका रहे हैं अपना शीश ॥
सुख शांति सौभाग्य प्रदायक, धर्म लोक में रहा महान् ।
उत्तम क्षमा आदि धर्मों का, करते हैं हम भी आह्वान ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दश-लक्षण धर्म ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दश-लक्षण धर्म ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ:-ठ: स्थापनं।
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दश-लक्षण धर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू-छन्द)

ध्यानमयी उत्तम जल लेकर, धारा तीन कराए हैं ।
जन्मादिक का रोग नाशकर, निज गुण पाने आए हैं ॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥1॥

ॐ ह्रीं उत्तम, क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्याणि दश-लक्षण धर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानादर्श का शीतल चन्दन, यहाँ चढ़ाने लाए हैं ।
भव संताप विनाश हेतु हम, आज यहाँ पर आए हैं ॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं ।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥2॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दश-लक्षण धर्माङ्गाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध भाव के अक्षय अक्षत, जल से धोकर लाए हैं।
अक्षय पद पाने को अनुपम, भाव बनाकर आए हैं॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥3॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दशलक्षण धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

चिदानन्द मय पुष्प मनोहर, चुन-चुनकर के लाए हैं।
काल अनादी काम वासना, यहाँ नशाने आए हैं ॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥4॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दशलक्षण धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्व.स्वाहा।

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण के, शुभ नैवेद्य बनाए हैं।
क्षुधा शांत करने को अपनी, यहाँ चढ़ाने आए हैं॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं॥5॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दशलक्षण धर्माङ्गाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज स्वभाव का दीप बनाकर, ज्ञान की ज्योति जलाए हैं।
मोह अंध के नाश हेतु हम, यहाँ चढ़ाने आए हैं॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥6॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दशलक्षण धर्माङ्गाय महामोहांधकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

अष्ट कर्म की धूप बनाकर, यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
सम्यक् तप की अग्नि जलाकर, स्वाहा करने आए हैं॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥7॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दशलक्षण धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज के गुण ही फल हैं अनुपम, वह प्रगटाने आए हैं।
मोक्ष महाफल पाने हेतू, ताजे फल यह लाए हैं॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं ।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥8॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दशलक्षण धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शाश्वत पद के बिना जगत में, बार-बार भटकाए हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें हम, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं ॥
निज स्वभाव को हम पा जाएँ, यही भावना भाते हैं ।
उत्तम धर्म प्रगट करने को, सादर शीश झुकाते हैं ॥9॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि-दशलक्षण धर्माङ्गाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **शांतिधारा दे रहे, शांति पाने नाथ ।**
शांत भाव के साथ हम, चरण झुकाते माथ ॥

(शांतये शांतिधारा)

पुष्पों से पुष्पाञ्जलि, करते हैं हम आज ।
भव बन्धन को नाशकर, पाने मुक्ती राज ॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जाप- ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तम क्षमादि धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा- **विशद धर्म के भाव से, कटे कर्म का जाल ।**
क्षमा आदि दश धर्म की, गाते हैं जयमाल ॥

(बेसरी-छन्द)

धर्म कहा दश लक्षण भाई, भवि जीवों को है सुखदायी ।
मोक्ष मार्ग में नौका जानो, मुक्ति का शुभ कारण मानो ॥
धारण करे धर्म जो कोई, कर्म नाश उसके भी होई ।
मोक्ष मार्ग का साधन जानो, जगजन का हितकारी मानो ॥
धर्म कहा है रक्षक भाई, धारण करो क्षमा हर्षाई ।
कहा मान का नाशनकारी, पग-पग पर होता हितकारी ॥
मायाचारी को भी नाशे, आर्जव धर्म क्षमा परकाशे ।
लोभ हृदय में न रह पावे, शौच धर्म उर में प्रगटावे ॥
मुख से सत्य वचन उच्चारे, सत्य धर्म जो उर में धारे ।
मन को वश में करते भाई, इन्द्रिय दमन करें हर्षाई ॥

बनते हैं संयम के धारी, हो जाते हैं जो अविकारी ।
मूल धर्म का सुतप बताया, मोक्ष मार्ग का कारण गाया ॥
करें निर्जरा तप से प्राणी, तीर्थंकर की है ये वाणी ।
त्याग धर्म सब पाप नशावे, जो निज के गुण भी प्रगटावे ॥
धर्माकिञ्चन सम ना कोई, परम ब्रह्म प्रगटावे सोई ।
दश लक्षण यह धर्म बखाना, सुख शांति का कारण माना ॥
सारे जग में रहा निराला, शिव पद में पहुँचाने वाला ।
दश लक्षण व्रत की विधि जानो, दश उपवास श्रेष्ठ पहिचानो ॥
बेला करो पारणा भाई, एकान्तर उपवास उपाई ।
शक्ति हीन हो कोई प्राणी, दश एकान्त करे सुखदानी ॥
व्रत दश वर्ष करे शुभकारी, फिर उद्यापन हो मनहारी ।
उद्यापन जो न कर पावें, वह दूने व्रत करते जावें ॥
यथा शक्ति फिर दान दिलावें, जैन धर्म उद्योत करावें ।
शक्ति हीन उर श्रद्धा धारें, धर्म ग्रहण के भाव सम्हारे॥

दोहा- विधी सहित जो व्रत करें, पूजन करें विधान ।
सुख शांति सौभाग्य पा, पावें पद निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं उत्तम, क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्याणि दश-लक्षण धर्माङ्गाय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

दोहा- दश लक्षण जिन धर्म का, रहे हृदय में वास ।
सम्यक् दर्शन ज्ञान का, नित प्रति होय विकास ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

भौतिकता के युग का देखो, धरम भी कितना सुन्दर है।
टी.वी. घर का चैत्यालय है, नगर सिनेमा मंदिर है॥

उत्तम क्षमा धर्म पूजा-1

स्थापना

स्वर्ग नरक मानव पशु गति में, त्रस स्थावर धरें शरीर ।
भ्रमण करें तीनों लोकों में, रहते हैं जो सदा अधीर ॥
जीवों पर जो दया धारते, समीचीन श्रद्धाधारी ।
उत्तम क्षमा धर्म पाते हैं, रत्नत्रय धर अनगारी ॥
सर्व लोक में श्रेष्ठ बताया, उत्तम क्षमा धर्म पावन ।
अपने उर के सिंहासन पर, करते हैं हम आह्वानन ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्म ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वननं ।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्म ! अत्र तिष्ठ:-तिष्ठ: ठ:-ठ: स्थापनं ।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमा धर्म ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(बेसरी-छन्द)

निर्मल प्रासुक नीर कराएँ, जल धारा देने को लाए ।
जन्मादि का रोग नशाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥1॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन घिसकर लाए, चरण चर्चने को हम आए ।
हम भी भव आताप नशाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥2॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय धवल सुअक्षत लाए, धोकर यहाँ चढ़ाने आए ।
अक्षय निधी श्रेष्ठ प्रगटाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥3॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सुगन्धित पुष्प मँगाए, प्रभु पद यहाँ चढ़ाने लाए ।
काम वासना पूर्ण नशाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥4॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतमय शुभ नैवेद्य बनाए, भरके थाल चढ़ाने लाए ।
क्षुधा रोग को पूर्ण नशाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥5॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय घृत के दीप बनाए, जगमग यहाँ जलाकर लाए ।
मोह अंध को दूर भगाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥6॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदनादि से धूप बनाए, अग्नि में खेने को लाए ।
अष्ट कर्म को पूर्ण नशाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥7॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल रसदार मँगाए, प्रभु पद यहाँ चढ़ाने लाएँ ।
मोक्ष महाफल को हम पाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥8॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य से अर्घ्य बनाए, मनहर यहाँ चढ़ाने लाए ।
पद अनर्घ्य शाश्वत प्रगटाएँ, परम धर्म को हम पा जाएँ ॥9॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्माङ्गाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम वलयः

दोहा– चढ़ा रहे हैं हम यहाँ, क्षमा धर्म के अर्घ्य।
पुष्पाञ्जलि करते विशद, पाने सुपद अनर्घ्य॥

प्रथम वलयोपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव बताए, भूजल अग्नि वायु गाये ।
वनस्पति साधारण जानो, प्रत्येक जीव बादर शुभ मानो॥1॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मस्थूल पंचस्थावर परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ कर्म का बन्ध जो पावें, एकेन्द्रिय जीवों में जावें।
सूक्ष्म स्थूल भेद दो गाए, पृथ्वीकायिक जीव कहाए॥2॥

ॐ ह्रीं पृथ्वीकायिक परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म बन्ध करते हैं प्राणी, एकेन्द्रिय पाते अज्ञानी।
बादर सूक्ष्म भेद दो गाए, जलकायिक प्राणी कहलाए॥3॥

ॐ ह्रीं जलकायिक परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निकाय जीव जो गाए, दुःख अनेकों प्राणी पाए।
जलते स्वयं जलाने वाले, प्राणी जग में रहे निराले॥4॥

ॐ ह्रीं अग्नि कायिक परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पवनकाय की महिमा न्यारी, होती है जग में मनहारी।
एकेन्द्रिय यह जीव बताए, दुःख अनेकों जिनने पाए॥5॥

ॐ ह्रीं वायुकायिक परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हरितकाय प्राणी कहलावें, छेदन–भेदन के दुःख पावें।
शीतादि की बाधा सहते, फिर भी मगन स्वयं में रहते॥6॥

ॐ ह्रीं वनस्पतिकायिक परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंखादि दो इन्द्रिय गाये, योनी जिन दो लाख बताए ।
सम्मूर्च्छन यह प्राणी जानो, त्रस कहलाए ऐसा मानो ॥7॥

ॐ ह्रीं द्रोइन्द्रिय जीव परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्थू आदि जीव रहे हैं, तीन इन्द्रिय जिनराज कहे हैं।
सम्मूर्च्छन यह प्राणी जानो, त्रस कहलाए ऐसा मानो ॥8॥

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजीव परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भ्रमरादी चउ इन्द्रिय जानो, त्रस सम्मूर्च्छन यह भी मानो ।
योनी जिन दो लाख गिनाए, भाँति भाँति के जो बतलाए ॥9॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रिय परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू–छन्द)

पञ्च इन्द्रियाँ पाने वाले, होते हैं जो मन से हीन ।
यह तिर्यंच गति में होते हैं, जो होते हैं बुद्धि विहीन ॥
चलते फिरते जो प्रमाद से, पीड़ित होते हैं कई बार ।
रक्षा उनकी करना भाई, क्षमा धर्म को उर में धार ॥10॥

ॐ ह्रीं असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बध बन्धन आदि दुख पाते, पञ्चेन्द्रिय पशु गति के जीव ।
भार वहन के दुख भी पाते, पराधीन हो कई अतीव ॥
बनो धर्म के धारी बन्धु, क्षमा धर्म को उर में धार ।
करुणा भाव हृदय में जागे, इन जीवों में दया विचार॥11॥

ॐ ह्रीं संज्ञी तिर्यंच परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप कर्म के फल से प्राणी, नरक गति में जाते हैं।
छेदन भेदन मारण तारण, शीत आदि दुख पाते हैं॥
बनो धर्म के धारी बन्धु, क्षमा धर्म को उर में धार ।
करुणा भाव हृदय में जागे, इन जीवों में दया विचार ॥12॥

ॐ ह्रीं नरकगति परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग द्वेष क्रोधादि के वश, मानव दु:ख पाते हैं घोर ।
माया तृष्णा में भटकाएँ, देश विदेशों चारों ओर ॥
बनो धर्म के धारी बन्धु, क्षमा धर्म को उर में धार ।
करुणा भाव हृदय में जागे, इन जीवों में दया विचार ॥13॥

ॐ ह्रीं मनुष्य गति परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्निकाय के देव कहाए, देव गति में विविध प्रकार ।
देख-देख इन्द्रों का वैभव, दुख पाते जो अपरम्पार ॥
बनो धर्म के धारी बन्धु, क्षमा धर्म को उर में धार ।
करुणा भाव हृदय में जागे, इन जीवों में दया विचार ॥14॥

ॐ ह्रीं देवगति परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से चतुर्गति में, भ्रमण करें इस जग के जीव ।
जन्म जरादि के दुख पाते, अन्य प्राप्त हों दु:ख अतीव ॥
बनो धर्म के धारी बन्धु, क्षमा धर्म को उर में धार ।
करुणा भाव हृदय में जागे, इन जीवों में दया विचार ॥15॥

ॐ ह्रीं त्रसस्थावर सर्वजीव परिरक्षण रूपोत्तम क्षमाधर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- उत्तम क्षमा को धारके, करना निज कल्याण।
भव सिन्धु को पारकर, पाना पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमाधर्माङ्गाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय नम:।

जयमाला

दोहा- जैन धर्म शाश्वत कहा, महिमा रही विशाल ।
धर्म क्षमा उत्तम 'विशद', गाते हैं जयमाल ॥

(शम्भू-छन्द)

उत्तम क्षमा धर्म के धारी, राग द्वेष से रहे विहीन ।
दुर्जन कृत उपसर्गों में भी, निज स्वभाव में रहते लीन ॥
रखते हैं समभाव सभी पर, क्रोध भाव से हीन कहे ।
रत्नत्रय के धारी पावन, अविकारी जिन संत रहे ॥1॥
दुखकर वचन बोलते उनको, मरम भेद युत अघकारी ।
मान खण्ड किरिया करवाते, फिर भी क्षमा करें भारी ॥
जो कोइ दुष्ट मुनि को मारें, तीक्ष्ण शस्त्र से करें प्रहार ।
तन को बाँधें करे खेद न, उनको करें क्षमा उर धार ॥2॥
अति दुखिया जीवों को जाने, अनुकम्पा उनमें मनहार ।
स्व-पर हित का मार्ग दिखावें, मुनिवर क्षमा धर्म को धार ॥
उत्तम क्षमा धर्म सुखदायी, सब जीवों को मंगलकार ।
यदि मुनिवर को कष्ट होय तो, क्षमा धार करते प्रतिकार ॥3॥
क्षमा धर्म सम ढाल न कोई, न प्रहार है क्रोध समान ।
क्षमा समान न धर्म है कोई, क्षमा धर्म धारें गुणगान ॥
क्षमा धर्म शिव राह दिखावे, क्षमा धर्म करता उपकार ।
क्षमा समान बन्धू न कोई, तात मात भाई परिवार ॥4॥
क्षमा धर्म से शिव सुख पावें, शाश्वत पावें शिव का द्वार ।
क्षमा धर्म आभूषण मुनि का, उर में धारें जो मनहार ॥
भव सागर से पार करैया, क्षमा धर्म सम नहीं महान् ।
तीन लोक में दिखता कोई, मंगलमय मंगल गुणखान ॥5॥

दोहा- क्षमा धर्म सम जीव का, सखा न जग में कोय ।
क्षमा धर्म को धारकर, शिवपुर वासी होय ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमाधर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भाते हैं हम भाव यह, क्षमा हृदय में आय ।
क्षमा 'विशद' जीवन बने, क्षमा न उर से जाय ॥

॥ इत्याशीर्वाद:॥ (पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

उत्तम मार्दव धर्म–पूजा 2

स्थापना

मार्दव धर्म कहा हितकारी, मान कषाय का नाशनहारी ।
हृदय धर्म धारें जो भाई, उनका जीवन हो सुखदायी ॥
मन से यही भावना भाते, अन्तर में हम भी हर्षाते ।
आह्वानन करने हम आए, पुष्पित पुष्प हाथ में लाए ॥

ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्म ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं ! अत्र तिष्ठः–तिष्ठः ठः–ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

(तर्ज : सोलहकारण पूजा)

प्रासुक निर्मल नीर भराय, भाव सहित त्रय धार कराय ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥1॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केसर में कर्पूर मिलाय, शीतल चंदन दिया चढ़ाय।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥2॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षय अक्षत दिए चढ़ाए, अक्षय पद हमको मिल जाय ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥3॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगन्धित लिए मँगाय, काम कलंक नाश हो जाय ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे बहु नैवेद्य बनाय, भाव सहित जो दिए चढ़ाए ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत का अनुपम दीप जलाय, मिथ्यातम का नाश कराय ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपाग्नि में दिए जलाय, अष्ट कर्मनाशी सुखदाय ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल रसदार चढ़ाय, मोक्ष सुफल प्राणी पा जाय ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाय, शाश्वत पद प्राणी प्रगटाय ।
परम सुखपाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥ परम..
मार्दव धर्म हृदय में धार, प्राणी होवे भव से पार ।
परम सुख पाय, धर्म हृदय जिसके आ जाय ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलयः

दोहा– उत्तम मार्दव धर्म है, जग में अपरम्पार।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, पाने भव से पार॥

द्वितीय वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली

(चौपाई)

सप्त तत्त्व में श्रद्धा पावे, श्रद्धानी से प्रीति बढ़ावे ।
मार्दव वृष धारी ये पावे, ये ही दर्शन विनय कहावे ॥1॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शन विनयोपेत मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् ज्ञानी विनय का धारी, पाके हो आह्लादित भारी।
मार्दव वृष धारी ये पावे, ये ही ज्ञान विनय कहलावे ॥2॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्ज्ञान विनयोपेत मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरह विधि चारित्र बताया, उत्तम चारित जिसने पाया ।
मार्दव वृष धारी ये पावे, ये ही चारित विनय कहावे ॥3॥

ॐ ह्रीं तेरह विध सम्यक्चारित्राय विनयोपेत मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

तप के द्वादश भेद बताए, इच्छा रोधी तप ये पाए ।
मार्दव वृष धारी ये पावे, ये ही तप की विनय कहावे ॥4॥

ॐ ह्रीं तप विनयोपेत मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिव पथ राही वृष के धारी, विनय करे उनकी शुभकारी।
मार्दव वृष का धारी पावे, ये उपचार विनय कहलावे ॥5॥

ॐ ह्रीं उपचार विनयोपेत मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

अतिशय क्षेत्र रहे मनहारी, देव किए जहँ अतिशय भारी ।
मार्दव धर्म की है बलिहारी, जिन क्षेत्रों को ढोक हमारी ॥6॥

ॐ ह्रीं अतिशय क्षेत्र पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मार्दव धर्म जीव जो पाए, कर्म नाश वह सिद्ध कहाए ।
सिद्ध क्षेत्र स्थान कहाया, जो त्रिलोक में पूज्य बताया ॥7॥

ॐ ह्रीं सिद्धक्षेत्र पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगत् पूज्य नव देव कहाए, मार्दव धर्म सहित जो गाए ।
अतिशय सिद्ध क्षेत्र नवदेव, पूज रहे हम जिन्हें सदैव॥8॥

ॐ ह्रीं अतिशय सिद्धक्षेत्र नवदेव पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तर्ज:- जिसने राग द्वेष...

जिनने कर्म घातिया नाशे, केवल ज्ञान प्रकाश किया ।
दोष अठारह से विरहित हो, निज स्वभाव में वास किया ॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाकर, उनके चरण चढ़ाते हैं ।
अर्हन्तों के श्री चरणों में, सादर शीश झुकाते हैं ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री अरहंत परमेष्ठिभ्यो पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म का नाश किए फिर, आठ महागुण प्रगटाए ।
ज्ञान शरीरी हुए महा प्रभु, अष्टम वसुधा को पाए ॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाकर, उनके चरण चढ़ाते हैं ।
जिन सिद्धों के श्री चरणों में , सादर शीश झुकाते हैं॥10॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिक्षा दीक्षा देने वाले, पालन करते पञ्चाचार ।
छत्तिस मूल गुणों के धारी, मुक्ति पथ के हैं आधार ॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाकर, उनके चरण चढ़ाते हैं ।
जैनाचार्यों के श्री चरणों में, सादर शीश झुकाते हैं॥11॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिभ्यो पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, पाठी मुनिवर रहे महान् ।
पच्चिस मूल गुणों के धारी, उपाध्याय हैं जगत प्रधान ॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाकर, उनके चरण चढ़ाते हैं ।
उपाध्याय के श्री चरणों में, सादर शीश झुकाते हैं॥12॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिभ्यो पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

विषयों की आशा के त्यागी, हैं आरम्भ परिग्रह हीन ।
रत्नत्रय के धारी मुनिवर, ज्ञान ध्यान तप रहते लीन ॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाकर, उनके चरण चढ़ाते हैं ।
सर्व साधुओं के श्री चरणों में, सादर शीश झुकाते हैं॥13॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

आगम वर्णित अधोलोक में, लाख बहत्तर कोटी सात ।
अकृत्रिम जिन चैत्यालय शुभ, शोभित होते हैं दिन-रात ॥

रत्न मई शोभा से मण्डित, महिमा जिनकी अपरंपार ।
अर्घ चढ़ाकर वंदन करते, विनय सहित हम बारम्बार ॥14॥

ॐ ह्रीं अधोलोक संबंधी चैत्यालय पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

स्वर्गों के नव ग्रैवेयक में, अनुदिश पंच अनुत्तर जान ।
अकृत्रिम जिन चैत्यालय शुभ, इनमें होते शोभामान ॥
रत्नमयी शोभा से मण्डित, महिमा जिनकी अपरंपार ।
अर्घ चढ़ाकर वंदन करते, विनय सहित हम बारम्बार ॥15॥

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोक संबंधी चैत्यालय पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

आगम वर्णित मध्यलोक में, चार सौ अट्ठावन मनहार ।
अकृत्रिम जिन चैत्यालय कई, कृत्रिम रहे अनेक प्रकार ॥
बृहस्पति भी जिसकी महिमा, का कर सकता नहीं बखान ।
मंगलमय जिन चैत्यालय को, विनय सहित वन्दन शत् बार ॥16॥

ॐ ह्रीं मध्यलोक संबंधी चैत्यालय पद नमन् मार्दव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

दोहा– उत्तम मार्दव पा सकें, करके मान अभाव।
विनय भाव उर में जगे, जो मेरा स्वभाव॥

ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप– ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तममार्दव धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा– मान शिला सिर पर रखे, बीता काल अनन्त ।
गाते हैं जयमालिका, पाने मद का अन्त ॥

(शम्भू–छन्द)

मार्दव धर्म मान का नाशी, उससे हो जग पूज्य महान् ।
सर्व दोष का नाशक मार्दव, मार्दव धारी हो गुणवान॥1॥
मार्दव धर्म पूज्य इन्द्रों से, पापों का नाशी मनहार ।
सब सुखकारी कहा लोक में, करता है इस भव से पार ॥
महामुनि धारण करते हैं, मार्दव धर्म है मंगलकार ।
शिवपद को देने वाला है, सर्व कर्म का नाशनहार ॥2॥

मार्दव धर्म का धारी जग में, यथायोग रखता सम्मान ।
मार्दव धर्म सिखावे लघुता, मार्दव धारी बने महान् ॥
मार्दव स्वर्ग सुखों का दाता, सर्व उपद्रव करता नाश ।
मार्दव धर्म सभी जीवों में, करता सम्यक् धर्म प्रकाश ॥3॥
मार्दव धर्म धारने वाला, बनता शिव का पथगामी ।
मार्दव धारी हो जाता है, उत्तम संयम का स्वामी ॥
मार्दव मोक्ष मार्ग का दाता, सारे जग का है त्राता ।
मार्दव धारी सुख इस जग के, जग में रहकर के पाता ॥4॥
मार्दव धर्म कल्पतरू जानो, इच्छित फल का है दाता ।
मार्दव धर्म रत्न चिंतामणि, कहा गया जग का त्राता ॥
मार्दव धर्म मुकुट जो धारे, मानव तिलक बने नर नाथ ।
मार्दव धर्म रत्न है पावन, चरण झुकाते हैं पद माथ ॥5॥
मोह मल्ल का मार्दव नाशी, सब धर्मों में रहा प्रधान ।
माला मार्दव की जो धारे, वह हो जाए जगत महान् ॥
मार्दव आभूषण वीरों का, कायर को है सिर का भार ।
यही भावना रही हमारी, मार्दव धारी करें भव पार ॥6॥
मद का दमन करें मार्दव से, पाप मैल करके क्षयकार ।
मुक्ति पथ पर बढ़ें हमेशा, मार्दव रथ पर हो अशवार ॥
मार्दव धर्म हृदय का भूषण, धारण करता जो गुणवान ।
अल्प समय में वह नर नायक, पा लेता है पद निर्वाण ॥7॥

दोहा– मार्दव महिमावान है, नहीं है जिसका पार ।
शांति कर सौभाग्य पद, जग में अपरम्पार ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दव धर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– मार्दव की महिमा अगम, करना कठिन बखान ।
'विशद' मार्दववान का, होय शीघ्र निर्वाण ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

उत्तम आर्जव धर्म पूजा-3

स्थापना

माया तजकर के जो प्राणी, धारण करते सरल स्वभाव ।
आर्जव धर्म प्राप्त करते वह, जिनको है मुक्ति की चाव ।।
उत्तम आर्जव धर्म जहाँ है, वहाँ न है छल का स्थान ।
विशद हृदय के आसन पर हम, आर्जव का करते आह्वान ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आर्जव धर्म ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

(बेसरी-छन्द)

नीर कलश में प्रासुक लाए, श्रद्धा सहित चढ़ाने आए ।
जन्म जरा का नाशनकारी, आर्जव धर्म प्रकाशनकारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेष्ठ सुगन्धित चन्दन लाए, यहाँ चढ़ाने को हम आए ।
भव आताप विनाशनकारी, आर्जव धर्म प्रकाशनकारी ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय संसार ताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षत मुक्ता फल से भाई, चढ़ा रहे हम यह सुखदायी ।
अक्षय पद पाएँ अविनाशी, बन जाएँ हम शिवपुर वासी ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्प सुगन्धित ले मनहारी, अर्पित करते मंगलकारी ।
काम वासना नाशनकारी, आर्जव धर्म प्रकाशनहारी ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

व्यंजन ताजे सरस बनाए, भर के थाल चढ़ाने लाए ।
क्षुधा रोग के नाशनकारी, आर्जव धर्म प्रकाशन हारी ।। 5।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

घृत के दीप सजाकर लाए, जगमग जगमग ज्योति जलाए ।
मोह तिमिर का नाशनकारी, आर्जव धर्म प्रकाशन हारी ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्ट गंध युत धूप बनाए, अग्नि में हम खेने लाए ।
अष्ट कर्म का नाशनकारी, आर्जव धर्म प्रकाशनकारी ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

नरियल अरु बादाम सुपारी, फल ताजे लाए मनहारी ।
शिव पद दायक शुभ मनहारी, आर्जव धर्म प्रकाशनकारी ।।8।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाए, अतिशय यहाँ चढ़ाने लाए ।
पद अनर्घ पाएँ अविकारी, आर्जव धर्म प्रकाशनकारी ।।9।।

ॐ ह्रीं श्री आर्जव धर्माङ्गाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तृतीय वलयः

दोहा- आर्जव धर्म की लोक में, महिमा गाते जीव।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, पाते पुण्य अतीव।।

तृतीय वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली (छंद बेसरी)

गुण छियालीस जहाँ प्रभु पावें, दोष अठारह पूर्ण नशावें।
हुए आप आर्जव गुणधारी, जिनके पद में ढोक हमारी।।1।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुण संयुक्त अरहंत पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

आठों कर्म नशाने वाले, सिद्ध शिला पर जाने वाले।
हुए आप आर्जव गुणधारी, जिनके पद में ढोक हमारी।।2।।

ॐ ह्रीं सिद्धशिला स्थित सिद्धपद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैनाचार्य मूलगुण पावें, भव्यों को शिवमार्ग दिखावें।
हुए आप आर्जव गुणधारी, जिनके पद में ढोक हमारी।।3।।

ॐ ह्रीं प्रत्यक्षपरोक्ष आचार्य पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपाध्याय पच्चिस गुणधारी, रहे लोक में मंगलकारी।
हुए आप आर्जव गुणधारी, जिनके पद में ढोक हमारी।।4।।

ॐ ह्रीं प्रत्यक्षपरोक्ष उपाध्याय पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय जिन मुनिवर पाते, द्रव्य भाव से हम गुण गाते।
हुए आप आर्जव गुणधारी, जिनके पद में ढोक हमारी॥5॥

ॐ ह्रीं प्रत्यक्षपरोक्ष साधु पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐकारमय जिनवर वाणी, सुनकर सुख पावें जग प्राणी।
जिससे सरल भाव हों भारी, जिनवाणी पद ढोक हमारी॥6॥

ॐ ह्रीं जैनागम नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय हुए जहाँ पर भारी, तीर्थ कहे वह मंगलकारी।
दर्श किए आर्जव गुण पावें, तीर्थों को हम शीश झुकावें॥7॥

ॐ ह्रीं अतिशय क्षेत्र नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सम्मेदशिखर शुभ जानो, शाश्वत् तीर्थ क्षेत्र पहिचानो।
दर्श किए आर्जव गुण पावें, तीर्थों को हम शीश झुकावें॥8॥

ॐ ह्रीं सिद्धपद सिद्धक्षेत्र नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्रिमाकृत्रिम बिम्ब निराले, वीतराग लक्षण गुण वाले।
दर्श किए आर्जव गुण पावें, तीर्थों को हम शीश झुकावें॥9॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिम जिनचैत्य पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हंतादि तीर्थंकर सारे, पूजनीय जो रहे हमारे।
दर्श किए आर्जव गुण पावें, तीर्थों को हम शीश झुकावें॥10॥

ॐ ह्रीं सकल पूज्य स्थानक नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छह निकाय के जीव बताए, मन वच तन से उन्हें बचाएँ।
परम अहिंसा व्रत का धारी, आयु काल पालें अविकारी॥
उत्तम आर्जव वृष के धारी, जीव मात्र के हैं हितकारी।
परम धरम के हैं रख वाले, शिवनगरी को जाने वाले॥11॥

ॐ ह्रीं अहिंसा व्रतोपेत परमेष्ठी पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य वचन बोलें हितकारी, महाव्रती होते अनगारी।
सत्य महाव्रत यही बताया, जैनागम में ऐसा गाया॥
उत्तम आर्जव वृष के धारी, जीव मात्र के हैं हितकारी।
परम धरम के हैं रखवाले, शिवनगरी को जाने वाले॥12॥

ॐ ह्रीं सत्यव्रतधारी पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीनाधिक वस्तु न देवें, बिन आज्ञा के कुछ न लेवें।
व्रत अचौर्य धारी कहलावें, जिन भक्ति कर दोष नशावें॥
उत्तम आर्जव वृष के धारी, जीव मात्र के हैं हितकारी।
परम धरम के हैं रखवाले, शिवनगरी को जाने वाले॥13॥

ॐ ह्रीं अचौर्यव्रतधारी पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वपर अंग में राग न धारें, ब्रह्मचर्य व्रत पूर्ण सम्हारें।
स्त्री में न प्रीति लगावें, संयम द्वारा कर्म नशावें॥
उत्तम आर्जव वृष के धारी, जीव मात्र के हैं हितकारी।
परम धरम के हैं रखवाले, शिवनगरी को जाने वाले॥14॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यव्रतधारी पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाह्याभ्यंतर परिग्रह त्यागें, आकिञ्चन में ही नित लागें।
परम अपरिग्रह व्रत को धारें, नव कोटी से राग निवारें॥
उत्तम आर्जव वृष के धारी, जीव मात्र के हैं हितकारी।
परम धरम के हैं रखवाले, शिवनगरी को जाने वाले॥15॥

ॐ ह्रीं अपरिग्रहव्रतधारी पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(विष्णुपद छंद)

नयन से दिन में देख यथावत, भूमी दण्ड प्रमाण।
ईर्या समिति तज प्रमाद नर, करें स्वपर कल्याण॥
परम धर्म आर्जव के धारी, करते सरल विचार।
जैन धरम के हैं रखवाले, शिव नगरी के द्वार॥16॥

ॐ ह्रीं ईर्यापथ समिति पद नमन् आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित मित प्रिय वचन कहते हैं, बोलें शब्द सम्हार।
भाषा समिति प्रयत्नकर बोलें, मन के दोष निवार॥
परम धर्म आर्जव के धारी, करते सरल विचार।
जैन धरम के हैं रखवाले, शिव नगरी के द्वार॥17॥

ॐ ह्रीं भाषा समिति व्रतधारी आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्नादान उत्पादन आदि, छियालिस दोष निवार ।
ध्यान सिद्धि के हेतु भोजन, लेते मुनि अनगार ।।
परम धर्म आर्जव के धारी, करते सरल विचार ।
जैन धरम के हैं रखवाले, शिव नगरी के द्वार ।।18।।

ॐ ह्रीं एषणा समिति व्रतधारी आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तु के आदान निक्षेप में, रखते यत्नाचार ।
देखभाल करके प्रमार्जन, समिति धरें मनहार ।।
परम धर्म आर्जव के धारी, करते सरल विचार ।
जैन धरम के हैं रखवाले, शिव नगरी के द्वार ।।19।।

ॐ ह्रीं आदान निक्षेपण समिति व्रतधारी आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकान्त ठोस निर्जन्तुक भू में, मल का करें निहार ।
समिति कही व्युत्सर्ग जिनेश्वर, जीवों के हितकार ।।
परम धर्म आर्जव के धारी, करते सरल विचार ।
जैन धरम के हैं रखवाले, शिव नगरी के द्वार ।।20।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग समिति व्रतधारी आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम रागादि के भाव, दूषण नाश करें ।
प्रभु धार समाधि भाव, निज में वास करें ।।
हो मनोगुप्ति का लाभ, चरणों में आए ।
यह अष्ट द्रव्य का अर्घ्य, चढ़ाने को लाए ।।21।।

ॐ ह्रीं मनोगुप्ति व्रतधारी आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तज कर दुर्जन के शब्द, वचन को गुप्त करें ।
चेतन में करके वास, सारे दोष हरें ।।
हो वचन गुप्ति का लाभ, चरणों में आए ।
यह अष्ट द्रव्य का अर्घ्य, चढ़ाने को लाए ।।22।।

ॐ ह्रीं वचनगुप्ति व्रतधारी आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन की चंचलता त्याग, स्थिर आसन हो ।
हो निज स्वभाव में वास, निज का शासन हो ।।

हो हमें गुप्ति का लाभ, चरणों में आए ।
यह अष्ट द्रव्य का अर्घ्य, चढ़ाने को लाए ।।23।।

ॐ ह्रीं कायगुप्ति व्रतधारी आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- उत्तम आर्जव धर्म पा, पाना शिव की राह।
राग द्वेष कषाय की, मिटे हृदय से दाह।।

ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमार्जव धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा- सरल भाव से जीव के, प्रगटे आर्जव धर्म।
गाते हम जयमालिका, नाश होंय अघ कर्म।।

(चौपाई)

सरल भाव प्राणी जो धारें, नहीं कुटिलता कभी विचारें ।
आर्जव धर्म धरें जो प्राणी, उनने ही जानी जिनवाणी ।।1।।
जो हैं छल या कपट के धारी, करते हैं वह मायाचारी ।
आर्जव धर्म उन्हें न भावे, सरल भाव मन में न आवे ।।2।।
रोग शोक वह प्राणी खोवें, सरल भाव जिनके भी होवें ।
अरति भाव मन में न आवें, आर्जव धर्म जीव जो पावें ।।3।।
जिनके शुद्ध भाव हो जावें, अपने सारे कर्म खिपावें ।
सरल स्वभावी प्राणी होवें, अपनी कर्म कालिमा खोवें ।।4।।
आर्जव धर्म नहीं जो पावें, वे प्राणी यह जगत भ्रमावें ।
सब दोषों को आर्जव खोवे, जिनके मन संशय न होवे ।।5।।
धर्मी आर्जव भाव बनावे, पापी माया में सुख पावे ।
सुरगति में आर्जव पहुँचावे, इन्द्रों सम वैभव भी पावे ।।6।।
अनुक्रम से शिव सुख उपजावे, आर्जव धर्म जीव जो पावे ।
आर्जव स्व-पर को सुखकारी, सुखी रहे आर्जव व्रतधारी ।।7।।
आर्जव की महिमा जिन गाए, आर्जव उत्तम धर्म बताए ।
आर्जव मेरे उर में आवे, जीवन यह पावन हो जावे ।।8।।

आर्जव धर्म जीव जो पावे, अपना शुभ सौभाग्य उपावे।
अपने सारे कर्म नशावे, अनुक्रम से वह मुक्ति पावे॥9॥
हम भी यही भावना भाते, आर्जव पाने को ललचाते ।
आगे अब न जगत भ्रमाएँ, कर्म नाशकर शिवपुर जाएँ ॥10॥

दोहा– सरल हृदय में आर्जव, प्रगटे धर्म प्रधान ।
निर्मलता निज भाव की, है इसकी पहिचान ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आर्जव धर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा– आर्जव की महिमा अगम, को कर सके बखान।
पाके देखो भ्रात तुम, पाओगे निर्वाण ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

उत्तम शौच धर्म पूजा–4

स्थापना

शौच धर्म को पाने वाले, करते हैं ममता का त्याग ।
वाञ्छा त्याग करें जो प्राणी, छोड़ रहे हैं धन से राग ॥
निर्मल अरु निर्दोष भाव के, प्राणी जग में रहे महान् ।
उत्तम शौच धर्म का उर में, करते हैं हम भी आह्वान ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्म ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं ! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः–ठः स्थापनं ! अत्र मम् सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं ।

(तोटक–छन्द)

निर्मल जल यह प्रासुक करके, यहाँ चढ़ाने हम लाए ।
जन्म मरण का नाश होय मम, विशद भावना यह भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥1॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिर का शीतल चंदन, केसर के संग घिस लाए ।
भव संताप नाश हो मेरा, विशद भावना हम भाए ॥

उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥2॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षय अक्षत धवल मनोहर, प्रासुक जल से धो लाए ।
अक्षय पद अविनाशी पाएँ, विशद भावना हम भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥3॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरभित पुष्प सुगन्धित अनुपम, कनक थाल में भर लाए ।
नशे काम की बाधा मेरी, विशद भावना हम भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

व्यंजन सरस अनेकों खाकर, तृप्त नहीं हम हो पाए ।
क्षुधा रोग हो नाश हमारा, विशद भावना हम भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मणिमय दीप जलाकर घी का, यहाँ चढ़ाने हम लाए।
मोह अंध विध्वंस होय अब, विशद भावना हम भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

परम सुगन्धित धूप दशांगी, अग्नि में खेने लाए ।
कर्म नाश हो जाएँ सारे, विशद भावना हम भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेष्ठ सरस कई फल खाकर भी, तृप्त नहीं हम हो पाए ।
मोक्ष महाफल पाने की शुभ, विशद भावना हम भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रासुक जल चंदन आदी का, अर्घ्य संजोकर यह लाए ।
पद अनर्घ पाने को अनुपम, विशद भावना हम भाए ॥
उत्तम शौच धर्म हितकारी, तीन लोक में अपरम्पार ।
वन्दन करते भाव सहित हम, तीन योग से बारम्बार ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्थ वलयः

दोहा– शौच धर्म की लोक में, महिमा गाते जीव।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, पाते पुण्य अतीव॥

चतुर्थ वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली

पुण्य योग से मिलें सकल सुख, देवगति के अपरम्पार ।
आयु सागर की पाकर भी, क्षण में हों मानो क्षयकार ॥
जान अनित्य जगत का वैभव, निर्मल भाव बनाना है ।
आतम शुद्ध बनाने हेतु, शौच धर्म अपनाना है ॥1॥

ॐ ह्रीं देवगति सुख वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छह खण्डों पर विजय प्राप्त की, चक्रवर्ति पद पाया है ।
इतना सब कुछ पाकर के भी, मन संतोष न आया है ॥
जान अनित्य जगत का वैभव, निर्मल भाव बनाना है ।
आतम शुद्ध बनाने हेतु, शौच धर्म अपनाना है ॥2॥

ॐ ह्रीं चक्रवर्ती पद भोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन खण्ड का वैभव पाया, सेना पाई विविध प्रकार ।
हैं असीम आशाएँ जिनका, पाया नहीं किसी ने पार ॥
जान अनित्य जगत का वैभव, निर्मल भाव बनाना है ।
आतम शुद्ध बनाने हेतु, शौच धर्म अपनाना है ॥3॥

ॐ ह्रीं नारायण पदभोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कामदेव का रूप सलौना, मोहित होते नर नारी ।
सुख अपार मिलता है जिनको, होते हैं वैभव धारी ॥
जान अनित्य जगत का वैभव, निर्मल भाव बनाना है ।
आतम शुद्ध बनाने हेतु, शौच धर्म अपनाना है ॥4॥

ॐ ह्रीं कामदेव पद भोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ भेद स्पर्श के जानो भाई रे।
विषयों में रूचि, काल अनादि पाई रे ।
शौच धर्म की जानो ये प्रभुताई रे।
विषयेच्छा अब पूर्ण नाश हो भाई रे ॥5॥

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रिय भोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्च भेद रस के बतलाए भाई रे ।
रस के विषयों में रूचि हमने पाई रे ।
शौच धर्म की जानो ये प्रभुताई रे।
विषयेच्छा अब पूर्ण नाश हो भाई रे ॥6॥

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियभोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद गंध के दो होते दुखदायी रे ।
हर्ष विषाद करें पाके नर भाई रे ॥
शौच धर्म की जानो ये प्रभुताई रे।
विषयेच्छा अब पूर्ण नाश हो भाई रे ॥7॥

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रिय भोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद वर्ण के पाँच गिनाए भाई रे ।
रंग बिरंगे चित्र देख खुशी पाई रे ॥

शौच धर्म की जानो ये प्रभुताई रे।
विषयेच्छा अब पूर्ण नाश हो भाई रे ॥8॥

ॐ ह्रीं चक्षुरेन्द्रिय भोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त कहे स्वर कर्णेन्द्रिय के भाई रे ।
गीत वाद्य की जिससे ध्वनि सुन पाई रे ॥
शौच धर्म की जानो ये प्रभुताई रे।
विषयेच्छा अब पूर्ण नाश हो भाई रे ॥9॥

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रियभोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छा मन की पूर्ण हुई न भाई रे ।
पुण्य योग से महिमा जग की पाई रे ॥
शौच धर्म की जानो ये प्रभुताई रे।
विषयेच्छा अब पूर्ण नाश हो भाई रे ॥10॥

ॐ ह्रीं मनवांछितभोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल छंद)

तन सप्त धातु मय जानो, अस्थिर अविकारी मानो ।
अब शौच धर्म प्रगटाएँ, न तन की वाञ्छा पाएँ ॥11॥

ॐ ह्रीं तन संबंधीभोग वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन पुण्य योग से आवे, लालच मन में उपजावे ।
अब शौच धर्म प्रगटाएँ, न धन की चाह बढ़ाएँ ॥12॥

ॐ ह्रीं धनवाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिजन दारा सुत भाई, इनसे बहु प्रीति बढ़ाई ।
अब शौच धर्म प्रगटाएँ, न इनमें राग बढ़ाएँ ॥13॥

ॐ ह्रीं सकल परिजन वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गृह का निर्माण कराया, उसमें ममत्व को पाया ।
अब शौच धर्म को पाएँ, इन सब से राग घटाएँ ॥14॥

ॐ ह्रीं गृह वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणवान पुत्र मिल जाए, वाञ्छा यह बहुत सताए।
अब शौच धर्म प्रगटाएँ, न सुत की चाह बढ़ाएँ॥15॥

ॐ ह्रीं पुत्र वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो विनयवान मम भ्राता, जिससे हम पाएँ साता।
अब शौच धर्म प्रगटाएँ, न भ्रात की चाह बढ़ाएँ॥16॥

ॐ ह्रीं भ्राता वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मित्रों से नेह लगाते, मन में यह राग बढ़ाते।
अब शौच धर्म प्रगटाएँ, न मित्र की चाह बढ़ाएँ॥17॥

ॐ ह्रीं मित्र वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैभव तन परिजन पाए, इन्द्रिय के विषय लुभाए ।
अब शौच धर्म प्रगटाएँ, इन पदों में न ललचाएँ ॥18॥

ॐ ह्रीं सकल वैभव वाञ्छाविहीन शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– उत्तम धर्म है शौच शुभ, करता भव से पार।
भाव सहित करते 'विशद', वन्दन बारम्बार॥

ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप– ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमशौच धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा– धर्म शौच प्रगटे हृदय, पूर्ण नाश हो लोभ ।
गाते हम जयमालिका, नाश हेतु सब क्षोभ ॥

(चौपाई)

उत्तम शौच धर्म मनहारी, लोभ कषाय का नाशनकारी ।
शौच पुण्य का वृद्धिकारी, अतिशय पाप प्रणाशन हारी ॥
शौच धर्म है प्यारा प्यारा, शौच धर्म है जग से न्यारा ।
चाह निवारण करने वाला, भव-भव के दुःख हरने वाला ॥
भवि जीवों का श्रेष्ठ सहारा, शौच बिना न कोई चारा ।
उत्तम शौच मुनिन को होवे, मन की सब कालुषता खोवे ॥
शौच धर्म है मंगलकारी, जग के सारे शोक निवारी ।
शौच सत्य का है अनुगामी, शौच धर्म को विशद नमामी ॥

शौच धर्म की महिमा गाते, तीन योग से शीश झुकाते ।
अपने सारे कर्म नशाते, चेतन में निर्मलता पाते ।।
शौच धर्म को जो भी ध्याते, संवर और निर्जरा पाते ।
शौच समान मित्र न कोई, शौच सर्व हितकारी होई ।।
शौच धर्म सब का हितकारी, रहा शौच जग में मनहारी ।
शौच धर्म समता को लावे, सुख शांति सौभाग्य बढ़ावे ।।
हम भी शौच धर्म प्रगटाएँ, अनुक्रम से शिव पदवी पाएँ।
हम हो जाएँ कर्म के नाशी, बन जाएँ शिवपुर के वासी ।।

दोहा- शौच धर्म को धार कर, पाना है शिव द्वार ।
जिसकी महिमा है अगम, जग में अपरम्पार ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौच धर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- इस असार संसार में, शौच धर्म शुभकार ।
सर्व सुखों का मूल है, भव दधि तारण हार ।।

।। इत्याशीर्वादः।।

उत्तम सत्य धर्म पूजा- 5

(स्थापना)

झूठ वचन कहकर के प्राणी, खो देते अपना विश्वास ।
सत्य धर्म ना आ पाता है, तीन काल में उनके पास ।।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ने हेतु, सत्य धर्म है अनुपम यान ।
अनुपम सत्य धर्म का करते, विशद हृदय में हम आह्वान।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम सत्य धर्म ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम सत्य धर्म ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम सत्य धर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं ।

(गीता छन्द)

हमने अनादि से कर्मों के, अज्ञानी हो घन घात सहे ।
यह जन्मादि के दुःख भोग, जो काल अनादि साथ रहे ।।

अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संतप्त हुए भव ज्वाला में, मन में बहु आकुलता पाई ।
अब भव सागर से तिरने की, मन में मेरे भी सुधि आई ।।
अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षण भंगुर जग वैभव पाकर, हम उसमें ही लवलीन हुए ।
न अक्षय पद हमने पाया, जग माया में तल्लीन हुए ।।
अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पीड़ित हो काम व्यथा से हम, तीनों लोकों में भटकाए ।
अब काम बाण विध्वंश हेतु, यह पुष्प चढ़ाने को लाए ।।
अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु क्षुधा रोग से व्याकुल हो, प्राणी इस जग में भटक रहे ।
अब नाश होय यह भी बाधा, जिसके कारण कई दुःख सहे ।।
अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहित करता है मोह कर्म, न धर्म प्रकट होने पावे ।
हो मोह अंध का नाश पूर्ण, शुभ ज्ञान दीप मम् जल जावे ।।

अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्वाला कर्मों की धधक रही, सदियों से हम जलते आएँ ।
कर्मों का नाश करें हम भी, न भव सागर में भटकाएँ ॥
अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या पुरुषार्थ किया अब तक, उसका फल पाकर हर्षाए ।
यह सरस श्रेष्ठ फल चढ़ा रहे, अब मोक्ष महाफल मिल जाए ॥
अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

इस जग से भिन्न अलौकिक पद, शाश्वत शिवपद पाने आए ।
शुभ अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बना, हम यहाँ चढ़ाने को लाए ।
अब सत्य धर्म को पाकर के, हम शाश्वत सुख को पा जाएँ ।
हम भी राही हैं शिवपुर के, अब न इस जग में भटकाएँ ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री सत्य धर्माङ्गाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चम वलयः

दोहा– सत्य धर्म है लोक में, महिमा मयी महान्।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, करते हम गुणगान॥

पञ्चम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली (चौपाई)

क्रोध सत्य का नाशनहारा, झूठ वचन का बने सहारा ।
उत्तम सत्य धर्म जो पावे, सत्य वचन मुख से प्रगटावे ॥1॥

ॐ ह्रीं क्रोध अतिचार रहित सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ हृदय में जिसके आवे, सत्य वचन वह न कह पावे ।
उत्तम सत्य धर्म जो पावे, सत्य वचन मुख से प्रगटावे ॥2॥

ॐ ह्रीं लोभ अतिचार रहित सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन में जिसके भय हो जावे, सत्य वचन वह न कह पावे ।
उत्तम सत्य धर्म जो पावे, सत्य वचन मुख से प्रगटावे ॥3॥

ॐ ह्रीं भय अतिचार रहित सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हास्य करें जो भी नर नारी, सत्य के न होते अधिकारी ।
उत्तम सत्य धर्म जो पावे, सत्य वचन मुख से प्रगटावे ॥4॥

ॐ ह्रीं हास्य अतिचार रहित सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैनागम जिन आज्ञा धारी, सत्य वचन के हैं अधिकारी ।
उत्तम सत्य धर्म जो पावे, सत्य वचन मुख से प्रगटावे ॥5॥

ॐ ह्रीं अननुवीचि भाषण अतिचार भावना रहित सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(ताटंक छंद)

जहाँ देश में जिस वस्तु को, कहते वैसा ही मानो ।
चावल भात कहे गुजराती, चोखा मालव में जानो ॥
चोरू, द्रविण, कुलु, कर्नाटक, में चावल का है व्यवहार ।
जनपद सत्य कहा यह भाई, जैन धर्म आगम अनुसार ॥6॥

ॐ ह्रीं जनपद सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुत लोग जिसको जो माने, उसको वैसा ही जानो ।
देवी स्त्री को कहते सब, उसको देवी पहिचानो ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
संवृत सत्य कहा यह भाई, जैन धर्म आगम अनुसार ॥7॥

ॐ ह्रीं संवृत सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चित्र काष्ठ पाषाणादि में, नर पशु का करते निर्माण ।
स्थापित कर करते उसमें, उस वस्तु का ही गुणगान ॥

चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
यह स्थापित सत्य कहा है, जैन धर्म आगम अनुसार ॥8॥

ॐ ह्रीं स्थापना सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस वस्तु को संज्ञा दी जो, मिले नाम का जो संयोग ।
सत्य मानते हैं उसको सब, नित प्रति करते हैं उपयोग ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
नाम सत्य कहलाए भाई, जैन धर्म आगम अनुसार ॥9॥

ॐ ह्रीं नाम सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोरा काला श्याम श्वेत है, मानव का जैसा स्वरूप ।
उसको सभी मानते वैसा, उस वस्तु का वैसा रूप ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
रूप सत्य कहलाए भाई, जैन धर्म आगम अनुसार ॥10॥

ॐ ह्रीं रूप सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक वस्तु दूजी वस्तु से, छोटी बड़ी कही जावे ।
सत्य बताया है प्रतीत यह, वह सापेक्ष कथन पावे ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
सत्य प्रतीति कहा गया यह, जैन धर्म आगम अनुसार ॥11॥

ॐ ह्रीं प्रतीति सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैद्य पुत्र को वैद्य नृपति सुत, को राजा कहते हैं लोग ।
नैगम नय से सत्य कहा यह, होता जो ऐसा उपयोग ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
यह व्यवहार सत्य है भाई, जैन धर्म आगम अनुसार ॥12॥

ॐ ह्रीं व्यवहार सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बू द्वीप को उल्टा कर दे, पाये शक्ती इन्द्र महान् ।
किन्तु ऐसा होय कभी ना, ऐसा कहते हैं भगवान ॥

चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
यह सम्भावना सत्य कहा है, जैन धर्म आगम अनुसार ॥13॥

ॐ ह्रीं सम्भावना सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दान वीर धनवान पुरूष को, धनद कहें जग में कई लोग ।
पुण्योदय से प्राप्त हुआ धन, दान में करता है उपयोग ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
उपमा सत्य कहा यह भाई, जैन धर्म आगम अनुसार॥14॥

ॐ ह्रीं उपमा सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य अमूर्तिक पाँच बताए, जीव अनादि कहा अनन्त ।
जिन सूत्रों से जाना जाता, ऐसा कहते हैं भगवन्त ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन का सही प्रकार ।
भाव सत्य यह कहा गया है, जैन धर्म आगम अनुसार॥15॥

ॐ ह्रीं भाव सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच भावनाएँ बतलाईं, कहे सत्य के भी दश भेद ।
सत्य धर्म के ज्ञान हेतु यह, बतलाए हैं सभी प्रभेद ॥
चले लोक व्यवहार इसी से, सत्य कथन आगम अनुसार।
सत्य धर्म का राही बनता, मानव जग में भली प्रकार॥

ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमसत्य धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा- सत्य धर्म उत्तम रहा, तीनों लोक त्रिकाल ।
सत्य धर्म की अब यहाँ, गाते हैं जयमाल ॥

(चाल टप्पा)

सत्य धर्म जग पूज्य बताया, आगम में भाई ।
सत्य महाव्रत की महिमा शुभ, संतों ने गाई ॥
सत्यव्रत धारो हो भाई ॥1॥

भव सागर से पार हेतु शुभ, नाव कहा भाई ।
महिमा सत्य धर्म की बन्धु, जिनवर ने गाई ।।
सत्यव्रत धारो हो भाई ।।2।।
सत्य धर्म की चाह सभी जन, रखते हैं भाई ।
सत्य धर्म है अंग श्रेष्ठ शुभ, जग मंगल दायी ।।
सत्यव्रत धारो हो भाई ।।3।।
सत्य धर्म के धारी की शुभ, फैले प्रभुताई ।
सत्य समान मित्र न कोई, इस जग में भाई ।।
सत्यव्रत धारो हो भाई ।।4।।
बैर भाव की सत्य धरम से, मिट जावे खाई ।
जीवों का अपयश भी क्षय हो, सत्य से ही भाई ।।
सत्यव्रत धारो हो भाई ।।5।।
सुर नर सभी सत्य की महिमा, गाते हैं भाई ।
पाप कर्म भी जग जीवों के, क्षण में क्षय जाई ।।
सत्यव्रत धारो हो भाई ।।6।।
सुखी रहें वे जीव सत्य के, हैं जो अनुयायी ।
भव सागर से मुक्ती सबने, सत्य से ही पायी ।।
सत्यव्रत धारो हो भाई ।।7।।
हरिश्चंद्र ने सत्य के द्वारा, प्रभुता बहु पाई ।
'विशद' भावना सत्य धरम की, पाने को भाई ।।
सत्यव्रत धारो हो भाई ।।8।।

दोहा– सत्यधर्म को प्राप्त कर, करें आत्म कल्याण ।
भव सागर से मुक्त हो, पावें पद निर्वाण ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम सत्य धर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– सत्यधर्म जग जीव को, करता भव से पार ।
शिव मग में मेरे लिए, बने विशद आधार ।।

।। इत्याशीर्वादः।।

उत्तम संयम धर्म पूजा– 6

स्थापना

महिमा संयम धर्म की, जग में रही महान् ।
उत्तम संयम प्राप्त कर, पाते पद निर्वाण ।।
विशद भाव से कर रहे, आज यहाँ गुणगान ।
उत्तम संयम धर्म का, करते हम आह्वान ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्म ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्म ! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः–ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्म ! अत्र मम् सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चौपाई)

प्रासुक निर्मल नीर भराए, अनुपम यहाँ चढ़ाने लाए ।
जन्म जरादि मम नश जाए, उत्तम संयम हमको भाए ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन घिसकर लाए, चारों दिश में जो महकाए ।
भवाताप मेरा नश जाए, अतः समर्पित करने लाए ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पुञ्ज चढ़ा हर्षाए, मुक्ताफल सम अक्षत लाए ।
मोक्ष महाफल पाने आए, संयम की हम महिमा गाए ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों पर भौरे मंडराएँ, ऐसे पुष्प सुगन्धित लाए ।
काम रोग मेरा नश जाए, ऐसे भाव बनाकर आए ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उपमा जिनकी कही न जाए, ऐसे शुभ नैवेद्य बनाए ।
क्षुधा व्याधि मेरी मिट जाए, अतः चढ़ाने को चरु लाए ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग जगमग दीप जलाए, तम नाशी जो मन को भाए ।
मोह शमन करने हम आए, सम्यक् ज्ञान जगाने आए ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर कृष्णागरु लाए, जिसकी अनुपम धूप बनाए ।
अग्नि में जो खेने लाए, कर्म नाश करने हम आए ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐला केला आदि मँगाए, थाली में भर के हम लाए ।
मोक्ष महाफल पाने आए, बिना मोक्ष के हम अकुलाए ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फलादि से अर्घ्य बनाएँ, भर के थाल चढ़ाने आए ।
पद अनर्घ पाने हम आए, नहीं आज तक जो हम पाए ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयम धर्माङ्गाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम वलयः

दोहा– संयम की महिमा अगम, कोई न पावे पार।
पूजा करके भाव से, धार सके तो धार॥

षष्ठम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली (चौपाई)

सूक्ष्म और स्थूल कहाए, पृथ्वी कायिक जीव बताए ।
एकेन्द्रिय के धारी जानो, पृथ्वी ही तन उनका मानो ॥
जग जीवों में करुणाकारी, उत्तम संयम के हैं धारी ।
संयम पाके मुक्ती पाएँ, हम भी ऐसे भाव बनाएँ ॥1॥

ॐ ह्रीं पृथ्वीकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

एकेन्द्रिय जलकायिक जानो, स्थूलत्व सूक्ष्म पहिचानो ।
जल ही जिनकी देह बताई, ओस बूँद सम आकृति गाई ॥
जग जीवों में करुणाकारी, उत्तम संयम के हैं धारी ।
संयम पाके मुक्ती पाएँ, हम भी ऐसे भाव बनाएँ ॥2॥

ॐ ह्रीं जलकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अग्निकायिक प्राणी गाए, सूक्ष्म और स्थूल बताए ।
अग्नि ही तन उनका जानो, सुई की नोंकों सम जो मानो ॥
जग जीवों में करुणाकारी, उत्तम संयम के हैं धारी ।
संयम पाके मुक्ती पाएँ, हम भी ऐसे भाव बनाएँ ॥3॥

ॐ ह्रीं अग्निकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

वायुकायिक जीव निराले, ध्वज समान जो उड़ने वाले ।
सूक्ष्म और स्थूल बताए, एकेन्द्रिय तन वायु पाये ॥
जग जीवों में करुणाकारी, उत्तम संयम के हैं धारी ।
संयम पाके मुक्ती पाएँ, हम भी ऐसे भाव बनाएँ ॥4॥

ॐ ह्रीं वायुकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नित्य इतर साधारण जानो, सूक्ष्म–स्थूल भेद पहिचानो ।
सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित भाई, वनस्पति प्रत्येक बताई ॥
जग जीवों में करुणाकारी, उत्तम संयम के हैं धारी ।
संयम पाके मुक्ती पाएँ, हम भी ऐसे भाव बनाएँ ॥5॥

ॐ ह्रीं वनस्पतिकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(चाल–टप्पा)

स्पर्शन रसना दो इन्द्री, पाते जो प्राणी ।
दो इन्द्रिय वह जीव कहाए, कहती जिनवाणी॥
जीव की है जो कल्याणी।
उत्तम संयम पाने वाले, रक्षक हैं ज्ञानी, जीव की है जो कल्याणी ॥6॥

ॐ ह्रीं दोइन्द्रियकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्पर्शन आदि इन्द्रिय तिय, पाते जो प्राणी ।
तीन इन्द्रिय वह जीव कहाए, कहती जिनवाणी ॥
जीव की है जो कल्याणी।
उत्तम संयम पाने वाले, रक्षक हैं ज्ञानी, जीव की है जो कल्याणी ॥7॥

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्पर्शन आदि चउ इन्द्री, पाते जो प्राणी ।
चउ इन्द्रिय वह जीव कहाए, कहती जिनवाणी ॥
जीव की है जो कल्याणी।
उत्तम संयम पाने वाले, रक्षक हैं ज्ञानी, जीव की है जो कल्याणी ॥8॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाँच इन्द्रियाँ पाने वाले, इस जग के प्राणी ।
कहे असंज्ञी मन से विरहित, कहती जिनवाणी ॥
जीव की है जो कल्याणी।
उत्तम संयम पाने वाले, रक्षक हैं ज्ञानी, जीव की है जो कल्याणी ॥9॥

ॐ ह्रीं असंज्ञी पंचेन्द्रियकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।

सर्व इन्द्रियाँ पाने वाले, मन पावें प्राणी।
संज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते, कहती जिनवाणी॥
जीव की है जो कल्याणी।
उत्तम संयम पाने वाले, रक्षक हैं ज्ञानी, जीव की है जो कल्याणी ॥10॥

ॐ ह्रीं संज्ञी पञ्चेन्द्रियकायिक जीवरक्षण रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।

(शम्भू छंद)

स्पर्शन के अष्ट विषय हैं, उनमें प्रीति लगाते हैं ।
अविरति के द्वारा कर्मों का, आस्रव करते जाते हैं ॥
विजय प्राप्त करके विषयों पर, उत्तम संयम पाते हैं।
कर्म नाश कर अपने सारे, विशद ज्ञान प्रगटाते हैं॥11॥

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रिय विषय वर्जन रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विषय पंच रसना इन्द्रिय के, उनमें प्रीति लगाते हैं ।
अविरत रहकर के कर्मों का, आस्रव करते जाते हैं ॥
विजय प्राप्त करके विषयों पर, उत्तम संयम पाते हैं।
कर्म नाश कर अपने सारे, विशद ज्ञान प्रगटाते हैं॥12॥

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रिय विषय वर्जन रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

घ्राणेन्द्रिय के विषय कहे दो, उनमें प्रीति लगाते हैं ।
अविरत रहकर के कर्मों का, आस्रव करते जाते हैं ॥
विजय प्राप्त करके विषयों पर, उत्तम संयम पाते हैं।
कर्म नाश कर अपने सारे, विशद ज्ञान प्रगटाते हैं॥12॥

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रिय विषय वर्जन रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विषय पंच चक्षु इन्द्रिय के, उनमें प्रीति लगाते हैं।
कर्मास्रव करते हैं भारी, वह अविरत कहलाते हैं॥
विजय प्राप्त करके विषयों पर, उत्तम संयम पाते हैं।
कर्म नाश कर अपने सारे, विशद ज्ञान प्रगटाते हैं॥13॥

ॐ ह्रीं चक्षुइन्द्रिय विषय वर्जन रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्णेन्द्रिय के विषय सात हैं, उनमें प्रीति लगाते हैं।
कर्मास्रव करते हैं भारी, वह अविरत कहलाते हैं॥
विजय प्राप्त करके विषयों पर, उत्तम संयम पाते हैं।
कर्म नाश कर अपने सारे, विशद ज्ञान प्रगटाते हैं॥14॥

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रिय विषय वर्जन रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हृदय कमल में अष्ट कमलदल, की रचना शुभ पाते हैं।
जिसके द्वारा जीव हिताहित, का उपयोग लगाते हैं॥
द्रव्य भाव मन भेद कहे दो, श्रेष्ठ जैन आगम अनुसार।
उत्तम संयम धारी मन से, कर विचार होते भव पार॥15॥

ॐ ह्रीं मन विषय वर्जन रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(चौपाई)

लाभालाभ संयोग वियोग, मित्र अरि सुख दुख हो रोग ।
फिर भी मन में समता पाय, सामायिक संयम कहलाए ॥16॥

ॐ ह्रीं सामायिक रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हो प्रमाद यदि बड़ा महान्, संयम की हो जाए हान ।
प्रायश्चित ले संयम को पाय, छेदोपस्थापना जो कहलाए ॥17॥

ॐ ह्रीं छेदोपस्थापना रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नित्यगमन होवे दो कोश, है निहार बिन तन निर्दोष ।
परिहार विशुद्धी संयम पाय, श्रेष्ठ ऋद्धिधर शिवपुर जाय ॥18॥

ॐ ह्रीं परिहार विशुद्धि रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्व कषाएँ होवें क्षीण, लोभ कषाय रहे अक्षीण ।
सूक्ष्म साम्पराय जो कहलाए, संयम धारी पूजा जाय ॥19॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्म साम्पराय रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उपशम क्षय हो जाय कषाय, यथाख्यात संयम कहलाय ।
कहा आत्म का है स्वरूप, प्रतिभाषित होवे उस रूप ॥20॥

ॐ ह्रीं यथाख्यात रूप संयम धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई–संयम कहा अनेक प्रकार, शिव सुखदायक मंगलकार ।
उत्तम संयम पूज्य त्रिकाल, नमन करे जग हो नत भाल ॥

ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप– ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमसंयम धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा– संयम शिव का कंत है, कर्मों का है काल ।
उत्तम संयम धर्म की, गाते हम जयमाल ॥1॥
संयम रत्न महान् है, संयम धर्म का मूल ।
उत्तम संयम प्राप्त कर, पाएँ भव का कूल ॥2॥

(चौपाई)

उत्तम संयम है सुखकारी, सारे जग में मंगलकारी ।
संयम जो भी प्राणी पावें, वे सब उत्तम सौख्य उपावें ॥1॥
संयम है शिव सुख का दाता, जीव मात्र का है जो त्राता ।
संयम जग में रक्षाकारी, संयम की महिमा है न्यारी ॥2॥
उत्तम संयम मुनिवर पावें, संयम पाके ध्यान लगावें ।
संयम से ही संवर होवे, कर्म निर्जरा करके खोवें ॥3॥

संयम मूल धर्म का जानों, संयम शिव का मार्ग बखानों ।
जन्मादि का रोग नशावें, उत्तम संयम जो नर पावें ॥4॥
मोह सुभट संयम से हारे, संयम सारे दोष निवारे ।
जीतें मन को संयम द्वारा, लक्ष्य बने प्रभु यही हमारा ॥5॥
संयम के दो भेद बताए, इन्द्रिय प्राणी संयम गाए ।
देशव्रती अणुव्रत को धारें, मुनिवर संयम पूर्ण सम्हारें ॥6॥
संयम तीर्थंकर भी पावें, अनन्त चतुष्टय तब उपजावें ।
संयम धर आतम को ध्यावे, संयम शिवपुर में पहुँचावे ॥7॥
संयम की जानो बलिहारी, सर्व सुखी हो जनता सारी ।
हम भी उत्तम संयम पावें, कर्म नाश कर शिव सुख पावें ॥8॥

दोहा– उत्तम संयम धर्म की, महिमा रही महान् ।
संयम पाके भव्य जन, हो जाते भगवान ॥

ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– संयम है उत्तम धरम, मोक्ष महल का द्वार ।
हर भव में संयम 'विशद', पाएँ बारंबार ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

उत्तम तप धर्म पूजा–7

स्थापना

सम्यक् तप के भेद कहे हैं, द्वादश आगम के अनुसार ।
रत्नत्रय के धारी मुनिवर, तप करते होके अविकार ॥
संवर होता कर्म निर्जरा, अतिशयकारी होय महान् ।
उत्तम तप का 'विशद' हृदय में, करते हैं हम भी आह्वान ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्म ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्म ! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः–ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्म ! अत्र मम् सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू छंद)

श्री जिन की वाणी का अमृत, जग को अभय प्रदान करे ।
निर्मल नीर चढ़ाते क्षण में, जन्म जरादि रोग हरे ।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय का शीतल उपवन, अनुपम शांति प्रदायक है ।
शीतल चंदन अर्पित करते, जो कर्मों का क्षायक है ।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय ज्ञानी तीर्थंकर जिन, अक्षय ज्ञान प्रदान करें ।
अक्षय अक्षत द्वारा हम भी, श्री जिन का सम्मान करें ।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सुमन सूर्योदय होते, निज आभा बिखराते हैं ।
पुष्प चढ़ाते हैं अनुपम जो, काम रोग विनशाते हैं ।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णा से मोहित होकर हम, सारा जग भटकाये हैं ।
नैवेद्य चढ़ाकर के ताजे अब, क्षुधा नशाने आये हैं ।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ केवल ज्ञान की ज्योति जगे, जो मोह तिमिर का नाश करे।
यह दीप जलाकर हम लाए , जो सम्यक् ज्ञान प्रकाश करे ।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का जाल बिछा भारी, हम उसमें फँसते आए हैं ।
हम आठों कर्म विनाश हेतु, यह धूप जलाने लाए हैं ।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस फल की हमको चाह रही, वह प्राप्त नहीं कर पाए हैं ।
अब मोक्ष महाफल पाने फल, यह सरस चढ़ाने लाए हैं।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।8।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बना, शुभ आज चढ़ाने लाए हैं।
हम फँसे रहे भव बन्धन में, वह बंध काटने आए हैं।।
संवर सहित निर्जरा करने, सम्यक् तप अपनाएँगे ।
यह संसार असार छोड़कर, मोक्ष महल में जाएँगे ।।9।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपो धर्माङ्गाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम वलयः

दोहा- कर्म निर्जरा सुतप से, होती अपरम्पार।
तप धारी का शीघ्र ही, नश जाता संसार।।

सप्तम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली (चौपाई)

विषय कषाय तजें आहार, अनशन तप है मंगलकार ।
उत्तम एक वर्ष का जान, भेद कई इसके पहिचान ॥1॥

ॐ ह्रीं अनशन तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भोजन भूख से जो कम खाय, यह ऊनोदर तप कहलाय ।
तप कर कर्म निर्जरा पाय, अनुक्रम से नर शिवपुर जाय ॥2॥

ॐ ह्रीं ऊनोदर तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन में सोच विधि कर जाय, मिले तभी वह भोजन पाय ।
तप यह जानो व्रत संख्यान, मुनिवर तप यह करें महान् ॥3॥

ॐ ह्रीं व्रत परिसंख्यान तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रस त्यागें शक्ति अनुसार, विषयों का करने परिहार ।
तप कहलाये रस परित्याग, इसमें रखना तुम अनुराग ॥4॥

ॐ ह्रीं रस परित्याग तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमि पाटा हो या घास, शांत रहें न होय उदास ।
प्रासुक शुभ शैया को पाय, विविक्त शैयासन तप कहलाय ॥5॥

ॐ ह्रीं विविक्त शैयासन तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों की तजकर के आस, सहें क्लेश देह से खास ।
काय क्लेश यह तप कहलाए, कभी नहीं मन में घबड़ाय ॥6॥

ॐ ह्रीं काय क्लेश तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो प्रमाद से लागे दोष, दूषण से होवें निर्दोष ।
करें प्रार्थना गुरू के पास, प्रायश्चित से मैटे संताप ॥7॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चित तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव शास्त्र गुरूवर के द्वार, अतिशय सिद्ध क्षेत्र उर धार ।
इनकी विनय करे गुण गान, विनय सुतप हो उन्हें महान् ॥8॥

ॐ ह्रीं विनय तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से होवे रोग, खेद का हो जावे संयोग ।
वह बाधा करने को दूर, वैयावृत्ती हो भरपूर ॥9॥

ॐ ह्रीं वैयावृत्ति तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की वाणी को पाय, हर्ष भाव से सुनें सुनाय।
स्वाध्याय ये तप कहलाय, तपकर प्राणी कर्म नशाय ॥10॥

ॐ ह्रीं स्वाध्याय तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो ममत्व का करते त्याग, तन से न रखते हैं राग ।
तप धारें प्राणी व्युत्सर्ग, कर्म नाश पावें अपवर्ग ॥11॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो एकाग्र चित्त हो जाय, परमेष्ठी का ध्यान लगाय ।
ध्यान सुतप पाके हर्षाय, कर्म निर्जरा कर शिव पाय ॥12॥

ॐ ह्रीं ध्यान तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छंद)

जिन गुण सम्पत्ती व्रत धारी, त्रेसठ करता है उपवास ।
भिन्न-भिन्न तिथियों में करके, विषयों से जो रहे उदास ॥13॥

ॐ ह्रीं जिन गुण सम्पति तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म क्षपण के हेतू तप यह, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ॥14॥

ॐ ह्रीं कर्मक्षपण तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म दहन व्रत के तप जानो, एक सौ अड़तालिस उपवास ।
भिन्न-भिन्न विधियों में करके, विषयों से जो रहें उदास ॥15॥

ॐ ह्रीं कर्म दहन तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंह निष्क्रीड़न व्रत में क्रमश:, क्रमश: बढ़के हों उपवास ।
पन्द्रह दिन में हीन करें फिर, मध्य पारणा होवे खास ॥
बत्तिस करें पारणा भाई, एक सौ पैंतालिस उपवास ।
यह उत्तम तप करने वाले, विषयों से नित रहें उदास ॥16॥

ॐ ह्रीं सिंहनिष्क्रीड़ित तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सर्वतोभद्र सुतप के, पच्चहत्तर होते उपवास ।
करें पारणा पच्चिस भाई, विषयों में जो रहें उदास ।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव, वह बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।17।।

ॐ ह्रीं सर्वतोभद्र तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महासर्वतोभद्र सुतप में, एक सौ छियानवे कर उपवास ।
करें पारणा उनन्चास दिन, विषयों की न जिसको आस ।।
दो सौ पैंतालिस दिन का व्रत, ये करके जिन विधि के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।18।।

ॐ ह्रीं महासर्वतोभद्र तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघु सिंहनिष्क्रीडन व्रत के, साठ बताए हैं उपवास ।
बीस पारणा करके अस्सी, दिन का होता है व्रत खास।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।19।।

ॐ ह्रीं लघुनिष्क्रीड़ित तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्तावलि व्रत में चौतिस दिन, पच्चिस होते हैं उपवास ।
नव दिन करे पारणा भाई, विषयों से भी रहें उदास ।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।20।।

ॐ ह्रीं मुक्तावलि तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकावलि व्रत में प्रति महिने, होते हैं छह-छह उपवास ।
एक वर्ष में करें बहत्तर, विषयों की तज कर के आस ।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।21।।

ॐ ह्रीं कनकावलि तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

होते है आचाम्ल सुतप में, सौ दिन के भाई उपवास ।
उन्नीस कहे पारणा उसमें, एक सौ उन्नीस दिन के खास ।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।22।।

ॐ ह्रीं आचाम्ल तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबिस दिन के करें पारणा, चौबिस ही होते उपवास ।
श्रेष्ठ सुदर्शन व्रत में भाई, तप करते तज जग की आस ।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।23।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक वर्ष का तप होता है, उत्तम जिन शासन में खास ।
भेद अन्य कई तप व्रत के हैं, विषयों की तजना है आस ।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।24।।

ॐ ह्रीं उत्कृष्ट तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप के भेद बताए द्वादश, व्रत भी होते कई प्रकार ।
कर्म नाशकर उत्तम तप से, प्राणी हो जाते भव पार ।।
कर्म निर्जरा करने को तप, करते विनय भाव के साथ ।
अल्प समय में भव्य जीव वह, बनते सिद्ध श्री के नाथ ।।

ॐ ह्रीं सर्व उत्तम तपो धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमतपो धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा- **सोना तप से शुद्ध हो, तप से होता लाल ।**
उत्तम तप के हेतु हम, गाते हैं जयमाल ।।

(शम्भू - छन्द)

इच्छाओं का रोध कहा तप, समीचीन हो भली प्रकार ।
बाह्य सुतप के भेद कहे छह, श्री जिनवाणी के अनुसार ।।

अनशन ऊनोदर तप जानो, और कहा व्रत परिसंख्यान ।
रस परित्याग विविक्त शैयाशन, काय क्लेश तप रहा महान् ॥1॥
भेद कहे छह अभ्यन्तर के, प्रायश्चित्त अरु विनय विवेक ।
व्युत्सर्ग वैयावृत्ति अरु, ध्यान सुतप है सबसे नेक ॥
नर जीवन का सार सुतप है, जिसको धारें ज्ञानी जीव ।
सम्यक् तप कर कर्म निर्जरा, क्षण में होती श्रेष्ठ अतीव ॥2॥
जो भी अब तक सिद्ध हुए हैं, सबने तप को पाया है ।
उत्तम तप करके संतों ने, मुक्ती पथ अपनाया है ॥
स्वजन और परिजन हैं तप ही, सुतप जीव का मित्र कहा ।
सुतप धर्म कहलाए जग में, सुतप श्रेष्ठ चारित्र रहा ॥3॥
तप इस जग में सुखदायी है, तप है शिव नगरी का द्वार ।
तप है पावन तीर्थ जगत में, तप जीवों का तारणहार ॥
महापुरुष तप धारण करते, धार सकें न कायर लोग ।
अविचल तप करने वालों को, मिलता मुक्ति वधु का योग ॥4॥
तप से आसन दृढ़ होता है, प्राणी सहते काय क्लेश ।
ज्ञान ध्यान करते हैं प्राणी, सम्यक् तप से यहाँ विशेष ॥
इन्द्रिय मन भी वश में होवे, भाते तपसी को न भोग ।
बनते हैं शुभ भाव जीव के, तप से होता शुद्धोपयोग ॥5॥

(अडिल्ल-छन्द)

सम्यक् तप ही नर जीवन का सार है, सम्यक् तप बिन जीवन यह बेकार है।
आतम करता पावन परम पवित्र है, तप ही सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित्र है ॥

ॐ ह्रीं उत्तम तपो धर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल-छन्द)

मन वच तन से सम्यक् तप को धारिए, मानव जीवन का शुभ सार विचारिए।
शिवरमणी के बनते तप से कंत हैं, उत्तम तप धारी होते जिन संत हैं ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

उत्तम त्याग धर्म पूजा- 8

स्थापना

रागी होकर के भव-भव में, जग से नाता जोड़ा है ।
तीन लोक की दौलत पाई, फिर भी माना थोड़ा है ॥
उत्तम त्याग धर्म का धारी, राग त्याग वैराग्य धरे ।
बन जाए वह शिव पथगामी, त्याग का जो आह्वान करे ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्म ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्म ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्म ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(गीतिका)

शुचि नीर निर्मल चरण रज में, श्रेष्ठ यह अर्पण करें ।
हम अर्चना कर रोग त्रय की, व्याधि सारी परिहरें ॥
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा॥1॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप का हो नाश चन्दन, श्रेष्ठ घिसकर लाए हैं ।
संसार के संताप से हम, मुक्ति पाने आए हैं ॥
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा॥2॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह धवल अक्षत पुञ्ज लेकर, अर्चना करते यहाँ।
प्रभु प्राप्त हो अक्षय सुपद अब, परम शाश्वत् पद महाँ॥
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा॥3॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शील के शुभ पुष्प मनहर, काम का करते हनन ।
जीव हो निष्काम योगी, प्राप्त कर शुभ आचरण ॥

शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा।।4।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस यह नैवेद्य पावन, क्षुधा रोग विनाशते ।
ज्ञान रवि अनुपम अलौकिक, सहज ही परकाशते ।।
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान दीपक हो प्रकाशित, भावना भाते यही ।
मोहतम का नाश करके, मार्ग हम पावें सही ।।
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा।।6।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप अग्नी में जलाते, कर्म का करने शमन ।
शिव महल में वास करने, सुपथ पर करते गमन ।।
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा।।7।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ फल निर्वाणकारी, हम चढ़ाने लाए हैं ।
मोक्षफल हो प्राप्त हमको, भावना यह भाए हैं ।।
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा।।8।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान का सोपान हो तो, शिव महल में वास हो ।
श्रेष्ठ शाश्वत पद मिले, यदि धर्म में विश्वास हो ।।
शुभ त्याग उत्तम धर्म पावन, लोक में गाया अहा ।
यह धर्म करके मोक्ष पाना, लक्ष्य मम अनुपम रहा।।9।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम् वलयः

दोहा– त्याग धर्म औषधि परम, धर्म है पावन त्याग।
त्याग धर्म में जीव तू, धार स्वयं अनुराग।।

अष्टम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली (चौपाई)

है मिथ्यात्व परिग्रह भारी, अंतरंग है जो दुःख कारी ।
त्याग करें मुनिवर जो ज्ञानी, वह पाते शिवपुर रजधानी ।।1।।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध परिग्रह जानो भाई, अन्तरंग है बहु दुखदायी ।
त्याग करें मुनिवर जो ज्ञानी, वह पाते शिवपुर रजधानी ।।2।।

ॐ ह्रीं क्रोध परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान परिग्रह है दुःख दायी, अन्तरंग जानो तुम भाई ।
त्याग करें मुनिवर जो ज्ञानी, वह पाते शिवपुर रजधानी ।।3।।

ॐ ह्रीं मान परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह जानो मायाचारी, अन्तरंग है बहु दुखकारी ।
त्याग करें मुनिवर जो ज्ञानी, वह पाते शिवपुर रजधानी ।।4।।

ॐ ह्रीं माया परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ पाप का बाप बताया, अन्तरंग परिग्रह जो गाया ।
त्याग करें मुनिवर जो ज्ञानी, वह पाते शिवपुर रजधानी ।।5।।

ॐ ह्रीं लोभ परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल–टप्पा)

हास्य कषाय परिग्रह जानो, अन्तरंग भाई ।
हास्य त्याग करके मुनियों ने, भी मुक्ती पाई ।।
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ।।6।।

ॐ ह्रीं हास्य कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रती कषाय परिग्रह गाया, अन्तरंग भाई ।
रती त्याग का भाव हृदय में, होता सुखदायी ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥7॥

ॐ ह्रीं रति कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरति कषाय लोक में बन्धु, बहु दुखकर गाई ।
अन्तरंग परिग्रह तजने से, हो शांति भाई ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥8॥

ॐ ह्रीं अरति कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शोक परिग्रह अन्तरंग है, कहे कौन भाई ।
समता धारी जिन संतों ने, शुभ मुक्ती पाई ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥9॥

ॐ ह्रीं शोक कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भय कषाय नो कही परिग्रह, अन्तरंग भाई ।
निर्भय साधक तज देते हैं, यह अति दुखदायी ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥10॥

ॐ ह्रीं भय कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कहा जुगुप्सा परिग्रह बन्धु, अन्तरंग भाई ।
सर्व जुगुप्सा तजने से हो, मुक्ती सुखदायी ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥11॥

ॐ ह्रीं जुगुप्सा कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेद कषाय दिखाए जग में, अपनी प्रभुताई ।
वेद रहित जिन मुनियों ने शुभ, मुक्ति वधु पाई ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥12॥

ॐ ह्रीं वेद कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग आग सम जला रहा है, निज के गुण भाई ।
राग परिग्रह तजने वाले, ने सिद्धी पाई ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥13॥

ॐ ह्रीं राग कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वेष परिग्रह है इस जग में, अतिशय दुखदायी ।
द्वेष त्यागने वाले संतो, ने मुक्ती पाई ॥
परिग्रह त्यागो हे भाई.....।
भव भव भ्रमण कराने वाला, अतिशय दुखदायी ॥14॥

ॐ ह्रीं द्वेष कषाय परिग्रह त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

परिग्रह क्षेत्रादि कहा, आगम में बहिरंग ।
परिग्रह त्यागी के हृदय, जागे विशद उमंग ॥15॥

ॐ ह्रीं क्षेत्रादि ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गृह परिग्रह बहिरंग है, पापों का आधार ।
परिग्रह त्यागी संत ही, पाते शिव का द्वार ॥16॥

ॐ ह्रीं गृह ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजत आदि शुभ धातु में, राग परिग्रह जान ।
परिग्रह त्यागी संत ही, पाते पद निर्वाण ॥17॥

ॐ ह्रीं रजत ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णाभूषण में लगा, जीवों को जो राग ।
शिव सुख पाता जीव वह, राग पूर्णत: त्याग ॥18॥

ॐ ह्रीं स्वर्णाभूषण ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सेवा करता दास है, उसमें होवे राग ।
त्याग धर्म से कर्म का, धरता है अनुराग ॥19॥

ॐ ह्रीं दास ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सेवा करती दासियाँ, उनमें रखना राग ।
कर्मों का बन्धन करें, त्याग सके तो त्याग ॥20॥

ॐ ह्रीं दासी ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोधन पशु गज राज धन, वाहनादि का राग ।
शिव पद पाने के लिए, राग पूर्णत: त्याग ॥21॥

ॐ ह्रीं गोधनराजवाहनादि ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धान्यादि के राग का, करना पूर्ण विनाश ।
त्याग धर्म के भाव से, होगा मुक्ती वास ॥22॥

ॐ ह्रीं धान्यादि ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्रादि का जो तेरे, मन में लगा है राग।
जला रहा सद्गुण तेरे, अत: राग अब त्याग ॥23॥

ॐ ह्रीं वस्त्रादि ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बर्तनादि परिग्रह विशद, देते हैं न साथ ।
इनका त्यागी ही बने, शिवनगरी का नाथ ॥24॥

ॐ ह्रीं बर्तनादि ममत्व त्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरंग परिग्रह के चौदह, बाह्य परिग्रह के दश भेद ।
चौबिस भेदों के निमित्त से, कहे अनतानन्त प्रभेद ॥
परिग्रह के त्यागी होते हैं, परम वीतरागी जिन संत ।
यही संत अनुक्रम से बनते, केवल ज्ञानी जिन अर्हन्त ॥

ॐ ह्रीं बाह्याभ्यंतर परिग्रह ममत्व त्याग पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमत्याग धर्माङ्गाय नम:।

जयमाला

दोहा– जयमाला गाते यहाँ, पाने उत्तम त्याग ।
बुझ जाए अब शीघ्र ही, भव भोगों की आग ॥

चौपाई

उत्तम त्याग धर्म शुभकारी, जिसको धारें मुनि अविकारी ।
त्याग योग्य संसार बताया, मुक्ती पथ जिसने अपनाया ॥1॥
हाथी घोड़ा गाड़ी जानो, सेना रथ आदि पहिचानो ।
इत्यादि में ममता त्यागें, मोक्ष मार्ग में जो जन लागें ॥2॥
त्यागें राज्य पाठ दुखदायी, क्षेत्रादि भी त्यागें भाई ।
स्वजन और परिजन भी त्यागें, करके क्षमा सभी से माँगें ॥3॥
अरति भाव न मन में लावें, समता भाव हृदय उपजावें ।
क्रोध मान माया के त्यागी, रत्नत्रय के हों अनुरागी ॥4॥
राग द्वेष भय लोभ न धारे, ऐसे त्यागी गुरु हमारे ।
रौद्र ध्यान करते न भाई, मदमत्सर त्यागें दुखदायी ॥5॥
हास्यादि सब तजने वाले, धर्म ध्यान जो हृदय सम्हाले ।
वीतराग मय व्रत के धारी, अरति भाव त्यागी अविकारी ॥6॥
बाह्याभ्यन्तर परिग्रह त्यागी, होते हैं अर्हत् गुणकारी ।
हम भी उनको मन से ध्याते, उनके चरणों प्रीति जगाते ॥7॥
त्यागी हम भी कब बन जाएँ, मन से यही भावना भाएँ ।
उत्तम त्याग धर्म को पाएँ, 'विशद' गुणों को हम उपजाएँ ॥8॥

दोहा– त्याग धर्म की लोक में, महिमा अगम अपार ।
त्यागी बनकर जीव सब, होते भव से पार ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्याग धर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– त्याग धर्म को प्राप्त कर, प्राणी बनते सिद्ध ।
अविचल अविनाशी बनें, तीनों लोक प्रसिद्ध ॥

॥ इत्याशीर्वाद:॥

उत्तम आकिञ्चन धर्म पूजा-9

स्थापना

वीतराग निर्ग्रन्थ दिगम्बर, मुनिवर जग में अपरम्पार ।
बाह्याभ्यन्तर परिग्रह त्यागी, सर्व जगत में मंगलकार ॥
उत्तम आकिञ्चन्य धर्म के धारी, होते सर्व महान् ।
उत्तम आकिञ्चन्य धर्म का, उर में हम करते आह्वान ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्म ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्म ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(सार-छन्द)

मोह महारिपु जय करने को, श्रद्धा का जल लाए ।
जन्म जरा हो नाश हमारा, विशद भावना भाए ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥1॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व.स्वाहा।

अव्रत सारे क्षय करने हम, पञ्च महाव्रत धारें ।
भव आताप विनाश हेतु शुभ, सम्यक् रत्न सम्हारें ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥2॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय भावों के द्वारा हम, अक्षय पदवीं पाएँ।
भव सागर का अन्त प्राप्त कर, सिद्ध शिला पर जाएँ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥3॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय के पुष्प चढ़ाएँ, विनय भाव से स्वामी ।
काम रोग विध्वंस होय अब, बन जाएँ निष्कामी ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा रोग पर जय पाने को, शुभ नैवेद्य चढ़ाएँ ।
श्रेष्ठ अनाहारी बनने को, संयम पथ अपनाएँ ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महामोह की अँधियारी हम, दूर नहीं कर पाए ।
केवल ज्ञानी रूप हमारा, कभी नहीं प्रगटाए ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टकर्म के वश होकर के, नाशी निज तरूणाई ।
उन कर्मों के नाश हेतु यह, ताजी धूप जलाई ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

महामोक्ष फल पाने का शुभ, अवसर न मिल पाया ।
आकिञ्चन स्वरूप हमारा, आज समझ में आया ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, आठों गुण प्रगटाएँ ।
पद अनर्घ शाश्वत है अनुपम, वह हम भी पा जाएँ ॥
आकिञ्चन शुभ धर्म प्राप्त कर, शिवनगरी को जाएँ ।
धर्म हृदय में धारण करने, सादर शीश झुकाएँ ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवम् वलयः

दोहा– धर्माकिञ्चन की रही, महिमा अगम अपार।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, मिले धर्म का सार॥

नवम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली (चौपाई)

नित्य नहीं है कुछ भी भाई, है अनित्य जग की प्रभुताई ।
तन मन धन सब अस्थिर जानो, धर्माकिञ्चन शाश्वत मानो ॥1॥

ॐ ह्रीं अनित्यरूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशरण सारा जगत दिखाए, अन्त समय कुछ काम न आए ।
मंत्र तंत्र भी काम न आए, धर्माकिञ्चन साथ निभाए ॥2॥

ॐ ह्रीं अशरणरूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह संसार अनादि गाया, इसमें सारा जग भरमाया ।
धनी गरीब सभी दुखियारे, सुखी रहें जो धर्म सम्हारे ॥3॥

ॐ ह्रीं संसाररूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मे एक मरण कर जावे, पुण्य पाप का फल इक पावे ।
चतुर्गति में एक भ्रमावे, आकिञ्चन हो मुक्ति पावे ॥4॥

ॐ ह्रीं एकत्वरूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीर नीर सम द्रव्यें जानो, फिर भी भिन्न भिन्न पहिचानो ।
जीव देह से भिन्न बताया, धर्माकिञ्चन मन को भाया ॥5॥

ॐ ह्रीं अन्यत्वरूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन निर्मल शुद्ध बताया, तन ये सप्त धातु मय गाया ।
इससे झरती है घिनकारी, अत: बनो आकिञ्चन धारी ॥6॥

ॐ ह्रीं अशुचिरूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या अव्रत योग कषाएँ, अरु प्रमाद आस्रव करवाएँ ।
अब प्रमाद से मुक्ति पाएँ, धर्माकिञ्चन हृदय सजाएँ ॥7॥

ॐ ह्रीं आस्रवरूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुप्ति समीति संयम धारी, संवर करते हो अविकारी ।
राग द्वेष मन में ना लावें, वे मुनि आकिञ्चन को पावें ॥8॥

ॐ ह्रीं संवररूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो हैं रत्नत्रय के धारी, सम्यक् तप करते हैं भारी ।
कर्म निर्जरा उन्हें बताई, धर्माकिञ्चन पावें भाई ॥9॥

ॐ ह्रीं निर्जरारूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छह द्रव्यों से पूरित जानो, तीन लोक यह शाश्वत मानो ।
लोक भावना मन से भावें, वे आकिञ्चन धर्म उपावें ॥10॥

ॐ ह्रीं लोकभावनारूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या में यह जगत भ्रमाए, अत: बोधि दुर्लभ हो जाए ।
ध्यान करें बोधि को पाएँ, आकिञ्चन हो शिवपुर जाएँ॥11॥

ॐ ह्रीं बोधिदुर्लभरूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तु स्वरूप धर्म बतलाया, दर्शन ज्ञान चरण युत गाया ।
दश विध धर्म दान चउ गाये, करके धर्म आकिञ्चन पाये ॥12॥

ॐ ह्रीं धर्मभावनारूपोत्तमाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(जोगीरासा–छन्द)

दासी दास स्वजन परिजन धन, इनमें ममता पावें ।
वह चैतन्य परिग्रह धारी, इस जग में भटकावें ॥
आकिंचन्य धर्म को पाकर, अपने कर्म विनाशें ।
निज आतम का ध्यान लगाकर, केवल ज्ञान प्रकाशें ॥13॥

ॐ ह्रीं चेतनरूपाब्रह्मपरित्यागाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाग बगीचा महल खजाना, कंचन रत्न सम्हारे ।
रहे अचेतन भिन्न जीव से, फिर भी ममता धारे ।।
आकिंचन्य धर्म को पाकर, अपने कर्म विनाशें ।
निज आतम का ध्यान लगाकर, केवल ज्ञान प्रकाशें ।।14।।

ॐ ह्रीं अचेतन रूपाब्रह्मपरित्यागाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या और कषायें चारों, नो कषाय भी जानो ।
अन्तरंग यह कहा परिग्रह, राग द्वेष से मानो ।।
आकिंचन्य धर्म को पाकर, अपने कर्म विनाशें ।
निज आतम का ध्यान लगाकर, केवल ज्ञान प्रकाशें ।।15।।

ॐ ह्रीं अंतरंग परिग्रह रूपाब्रह्मपरित्यागाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकमेक है तन में चेतन, फिर भी भिन्न कहाए ।
प्रकट भिन्न है धन गृह गोधन, फिर क्यों अपने गाए ।।
आकिंचन्य धर्म को पाकर, अपने कर्म विनाशें ।
निज आतम का ध्यान लगाकर, केवल ज्ञान प्रकाशें ।।16।।

ॐ ह्रीं बहिरंग परिग्रह रूपाब्रह्मपरित्यागाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन, और परिग्रह गाए ।
नहीं किया आतम का चिन्तन, अत: जगत भरमाए ।।
आकिंचन्य धर्म को पाकर, अपने कर्म विनाशें ।
निज आतम का ध्यान लगाकर, केवल ज्ञान प्रकाशें ।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा चिंतनसर्वपरिग्रह आकांक्षा त्यागाकिंचन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य मंत्र– ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमाकिंचन धर्माङ्गाय नम:।

जयमाला

दोहा– आकिञ्चन शुभ धर्म की, महिमा रही महान् ।
जयमाला गाते शुभम्, करते हैं गुणगान ।।

(पद्धड़ि–छन्द)

वृष आकिन्चन लिए धार, उनकी महिमा का नहीं पार ।
किञ्चित् न मन में करें राग, वह सन्त कहे हैं वीतराग ।।1।।
जो रत्नत्रय के रहे कोष, व्रत में जिनके न लगें दोष ।
जो पञ्च पाप से हैं विहीन, निज ज्ञान ध्यान में रहे लीन ।।2।।
जिनके मन में है चाह दाह, वह आकिञ्चन से रहे बाह्य ।
लोभी आकिञ्चन नहीं पाय, वाञ्छा में उसका मन भ्रमाय ।।3।।
है श्रेष्ठ आकिञ्चन वृष निधान, कई इन्द्र करें पूजा महान ।
तन धन का रंचक नहीं पाय, उसके मन में वृष नहीं भाय ।।4।।
रागी के सिर का रहा भार, न आकिञ्चन का मिले सार ।
आभूषण वीरों का महान्, निर्ग्रन्थों की है जो श्रेष्ठ शान ।।5।।
साधु जो होते निर्विकार, उनके जीवन का रहा हार ।
जिनकी महिमा का नहीं पार, जो होकर रहते निराकार ।।6।।
मन में मेरे है यही चाह, हम भी चल पायें यही राह ।
इस जीवन का अब मिले सार, आकिञ्चन हो मम हृदय हार ।।7।।

दोहा– आकिन्चन वृष का मिले, हमको शुभ आधार ।
एक यही है भावना, पाएँ यह उपहार ।।
आकिञ्चन को धार के, हो जाते अविकार ।
शिव नगरी के महल का, खुले शीघ्र ही द्वार ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिञ्चन धर्माङ्गाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– आकिञ्चन वृष धार कर, हुए जीव सब सिद्ध ।
सुख अनन्त पाए 'विशद', जो हैं जगत प्रसिद्ध ।।

।। इत्याशीर्वाद:।।

बहुत अच्छा हुआ दुनियाँ बेवफाई हो गई, सारे रिश्तों नातों की सफाई हो गई।
खून के रिश्ते बने हैं 'विशद' खून चूसने के लिए, खून के व्यापार में दुनियाँ कषाई हो गई।।

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म पूजा–10

स्थापना

स्त्री सुर नर पशू की, चित्र मयी हो नार ।
ब्रह्मचर्य व्रत के धनी, इनसे हों अविकार ।।
रमण करें निज ब्रह्म में, ज्ञानी ज्ञान प्रवीण ।
चित् चेतन के भोग में, रहते हरदम लीन ।।
ब्रह्मचर्य व्रत लोक में, अतिशय रहा महान् ।
विशद हृदय में आज हम, करते हैं आह्वान।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः–ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

(वीर छन्द)

महामोह मिथ्यात्व नाश कर, करें आत्मा का उद्धार ।
जन्मादि त्रय रोग रहें ना, सुपद प्राप्त होवे अविकार ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चन्दन परम सुगन्धित, जिसकी महिमा अपरम्पार ।
भवाताप हो नाश हमारा, पा जाएँ शिवपद शुभकार ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम अक्षत यह पावन, अक्षयकारी मंगलकार ।
अक्षय पद की प्राप्ति हेतु हम, अर्पित करते बारम्बार ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध भाव के पुष्प सुकोमल, परम सुगन्धित हैं मनहार ।
काम रोग नश महाशील गुण, का हम पा जाएँ उपहार ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हो विभाव का नाश हमारा, शुभ भावों का करें विकाश ।
क्षुधा रोग का नाश शीघ्र कर, सिद्ध शिला पर करें निवास ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् ज्ञान के दीप जलाकर, निज के गुण का करें प्रकाश ।
पद पाएँ अविनाशी अविचल, मोह तिमिर का करके नाश ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म की धूप बनाकर, खेते अग्नि के मझधार ।
हमें सताया जिन कर्मों ने, होवे अब उनका संहार ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत ज्ञान के श्रेष्ठ तरु से, फल यह लाए अतिशयकार ।
पाने मोक्ष महाफल हम भी, आये हैं जिन प्रभु के द्वार ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ।।8।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन ज्ञानाचरण तपोमय, आराधन खोले शिवद्वार ।
पद अनर्घ अविलम्ब प्राप्त हो, हो स्वरूप मेरा शिवकार ॥
उत्तम ब्रह्मचर्य है अनुपम, महिमा जिसकी रही महान् ।
निज स्वभाव में रमने वाले, जीव सभी बनते भगवान ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अनर्घ्यपदप्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशम वलयः

दोहा– सब धर्मों में श्रेष्ठ है, ब्रह्मचर्य शुभ धर्म।
पूजा करते भाव से, कट जाते सब कर्म॥

दशम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली (शम्भू-छंद)

स्त्री राग कथा सुनने और, करने का भी करना त्याग ।
उत्तम ब्रह्मचर्य पाने को, शील भाव में हो अनुराग ॥1॥

ॐ ह्रीं स्त्री सहवास वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्री का तन राग भाव से, नहीं देखिए हो अविकार ।
उत्तम ब्रह्मचर्य का धारी, शील भाव पावे शुभकार ॥2॥

ॐ ह्रीं स्त्री मनोहरांग निरीक्षण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व भोग के चिन्तन विरहित, निज स्वभाव में रहते लीन ।
उत्तम शील व्रतों के धारी, ब्रह्मचर्य में रहे प्रवीण ॥3॥

ॐ ह्रीं पूर्वभोगानुस्मरण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कामोद्दीपक भोजन त्यागी, षट् रस का भी करते त्याग ।
रत रहते हैं शील भाव में, ब्रह्म व्रतों में कर अनुराग ॥4॥

ॐ ह्रीं वृष्येष्ट वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन श्रृंगारित नहीं करें जो, श्रृंगारित से रहें उदास ।
शील व्रतों से भूषित होकर, ब्रह्मचर्य व्रत धारें खास ॥5॥

ॐ ह्रीं स्वशरीर श्रृंगार वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

पर विवाह न करे कराय, ब्रह्मचर्य व्रत जो अपनाय ।
धरे शील व्रत का श्रृंगार, पाने मुक्ति वधु का प्यार ॥6॥

ॐ ह्रीं पर विवाहकरण अतिचार वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर गृहीत स्त्री के पास, जाने की न रखता आस ।
धरे शील व्रत का श्रृंगार, पाने मुक्ति वधु का प्यार ॥7॥

ॐ ह्रीं परगृहीत वनितागमन वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर गृहीत स्त्री के पास, करता नहीं कभी सहवास ।
धरे शील व्रत का श्रृंगार, पाने मुक्ति वधु का प्यार ॥8॥

ॐ ह्रीं अपरिगृहीत वनितागमन वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अनंग क्रीड़ा को त्याग, करता निज गुण में अनुराग ।
धरे शील व्रत का श्रृंगार, पाने मुक्ति वधु का प्यार ॥9॥

ॐ ह्रीं अनंग क्रीड़ा वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम तीव्रादि सभी विकार, तज करके होता अविकार ।
धरे शील व्रत का श्रृंगार, पाने मुक्ति वधु का प्यार ॥10॥

ॐ ह्रीं कामतीव्राभिनिवेश वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्री शैया हो सहवास, वहाँ न करते कभी निवास ।
ब्रह्मचर्य व्रत धारी संत, करते हैं कर्मों का अंत ॥11॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्य वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(तर्ज – भाई रे...)

काम कथा ना मन में लावें भाई रे, सुने नहीं विकथा कभी दुखदायी रे।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥12॥

ॐ ह्रीं काम कथा वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णोदर भोजन न करते भाई रे, ऊनोदर में चित्त रमाते भाई रे ।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥13॥

ॐ ह्रीं उदरपूर्णासन वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवधा शील का पालन करते भाई रे, निज स्वभाव में रत रहते हैं भाई रे।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥14॥

ॐ ह्रीं नवधाशीलपालनोत्तम वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम देव को वश में करते भाई रे, शोषण काम बाण वर्जन हो भाई रे।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥15॥

ॐ ह्रीं शोषण कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण संताप बढ़ाते भाई रे, कामदेव को वश में करते भाई रे।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥16॥

ॐ ह्रीं सन्ताप कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण उच्चाटन तजते भाई रे, निज परमातम को नित भजते भाई रे।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥17॥

ॐ ह्रीं उच्चाटन कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वशीकरण न काम का होवे भाई रे, कामी कामवासना तजते भाई रे।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥18॥

ॐ ह्रीं वशीकरण कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण से घायल है जग भाई रे, मोहन काम के वश न होते भाई रे।
शील व्रतों की जानो ये प्रभुताई रे, ब्रह्मचर्य व्रत पूजक जहाँ में भाई रे॥19॥

ॐ ह्रीं मोहनीय कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(टप्पा चाल)

कामी रूप देख स्त्री का, मुलकावे भाई ।
ब्रह्मचर्य व्रत धारी इससे, रहित कहे भाई ॥
शील व्रत धारो हो भाई।
ब्रह्मचर्य है पूज्य लोक में, अतिशय सुखदायी, शील व्रत धारो हो भाई॥20॥

ॐ ह्रीं मुलकन कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्री तन को अवलोकन की, वाञ्छा हो भाई ।
ब्रह्मचर्य व्रत धारी इसका, त्याग करें भाई ॥

शील व्रत धारो हो भाई।
ब्रह्मचर्य है पूज्य लोक में, अतिशय सुखदायी, शील व्रत धारो हो भाई॥21॥

ॐ ह्रीं अवलोकन कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचन नहीं कह पावे तो कोई, चेष्टा दिखलाई ।
ब्रह्मचर्य व्रत का धारी यह, करें नहीं भाई ॥
शील व्रत धारो हो भाई।
ब्रह्मचर्य है पूज्य लोक में, अतिशय सुखदायी, शील व्रत धारो हो भाई॥22॥

ॐ ह्रीं इंगितचेष्टा वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करके हँसी रिझाने वाले, स्त्री कोई भाई।
शीलव्रती वह हास्य त्यागते, हृदय हरषाई॥
शील व्रत धारो हो भाई।
ब्रह्मचर्य है पूज्य लोक में, अतिशय सुखदायी, शील व्रत धारो हो भाई॥23॥

ॐ ह्रीं हास्य कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम से पीड़ित होके प्राणी, प्राण तजें भाई ।
कामबाण त्यागें जिन मुनिवर, हिरदय हरषाई ॥
शील व्रत धारो हो भाई।
ब्रह्मचर्य है पूज्य लोक में, अतिशय सुखदायी, शील व्रत धारो हो भाई॥24॥

ॐ ह्रीं मारण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश विध कामबाण को नाशें, शीलवान भाई ।
ब्रह्मचर्य व्रत धारी की है, अतिशय प्रभुताई ॥
शील व्रत धारो हो भाई।
ब्रह्मचर्य है पूज्य लोक में, अतिशय सुखदायी, शील व्रत धारो हो भाई॥25॥

ॐ ह्रीं दशविध कामबाण वर्जनोत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- ब्रह्मचर्य शुभ धर्म है, उत्तम महति महान्।
रमण होय जिन ब्रह्म में, करते हम गुणगान॥

ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य- ॐ ह्रीं अर्हन्मुख कमल समुद्गताय उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय नमः।

जयमाला

दोहा- ब्रह्मचर्य व्रत की रही, महिमा अपरम्पार ।
गाते हैं जयमाल हम, छूटे यह संसार ।।

(बेसरी-छंद)

ब्रह्मचर्य व्रत अनुपम जानो, मोक्ष महल का मारग मानो ।
ब्रह्मचर्य पापों का नाशी, ब्रह्मव्रती जग में विश्वासी ।।1।।
ब्रह्मचर्य मानव ही धारें, परम अहिंसा धर्म सम्हारें ।
ब्रह्मचर्य व्रत जो भी पावें, स्वर्ग मोक्ष को प्राणी जावें ।।2।।
ब्रह्मचर्य स्वाधीन करावे, नेह त्रिया का भी नश जावे ।
ब्रह्मचर्य की महिमा न्यारी, ब्रह्मचर्य होता शिवकारी ।।3।।
ब्रह्मचर्य व्रत शील कहावे, श्रावक साधु यह व्रत पावे ।
सेठ सुदर्शन ने व्रतधारा, सूली बनी सिंहासन प्यारा ।।4।।
शील सती सीता ने पाया, अग्नि का शुभ कमल रचाया ।
शील सती सोमा ने पाला, नाग बना फूलों की माला ।।5।।
उत्तम ब्रह्मचर्य व्रत धारी, निज आतम का बने पुजारी ।
बनते चेतन रस के भोगी, कहलाते हैं उत्तम भोगी ।।6।।
निज आतम में रमण करावे, ब्रह्मचर्य जो मानव पावे ।
तन चेतन में ओज बढ़ावे, श्रेष्ठ गुणों में प्रीति करावे ।।7।।
ब्रह्मचर्य सम धर्म न भाई, इस जगती में है सुखदायी ।
ब्रह्मचर्य व्रत शिव सुखकारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी ।।8।।
उत्तम ब्रह्मचर्य जो पाए, परम ब्रह्म में वह रम जाए ।
जिसने ब्रह्मभाव प्रगटाया, उसने शिव पदवी को पाया ।।9।।
सिद्ध श्री को प्राणी पाए, गुण अनन्त क्षण में प्रगटाए ।
हम भी विशद भावना भाए, ब्रह्म भाव मेरा जग जाए ।।10।।

दोहा- ब्रह्मचर्य को धारकर, सिद्ध बनें गुणवान ।
अनुपम यह व्रत प्राप्त कर, पाएँ पद निर्वाण ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शीलव्रती के शील से, अतिशय हुए महान् ।
शिवपथ के राही बने, पाया जग सम्मान ।।

।। इत्याशीर्वादः।।

जाप्य मंत्र- ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा- क्षमा आदि दश धर्म शुभ, शिव पद के सोपान ।
जयमाला गाकर यहाँ, करते हैं गुणगान ।।

(शम्भू-छन्द)

उत्तम क्षमा धर्म इस जग में, मंगलकारी कहे जिनेश ।
वीतराग रत्नत्रय धारी, मुनिवर पाते क्षमा विशेष ।।
मृदु भाव को पाने वाले, पाते मार्दव धर्म महान् ।
उत्तम मार्दव प्राप्त हमें हो, जो है जग में महिमावान ।।1।।
आर्जव धर्म कहा सुखकारी, सरल स्वभावी पावें जीव ।
शिवपथ का राही बनता है, पुण्य प्राप्त जो करें अतीव ।।
निर्मलता हो शौच धर्म से, विशद हृदय जागे संतोष ।
साफ होय निज अन्तर का मल, आतम होती है निर्दोष ।।2।।
उत्तम सत्य धर्म के धारी, का सब करते हैं विश्वास ।
वाणी पर संयम रखता है, बने नहीं वचनों का दास ।।
मन इन्द्रिय को वश में करने, प्राणी रक्षा का हो ध्यान ।
समिति गुप्ति का पालन करना, उत्तम संयम कहा महान् ।।3।।
इच्छाओं का रोध कहा तप, जैनागम में श्री जिनेश ।
कर्मों के क्षय हेतू तपते, उत्तम तप जिन ऋषि विशेष ।।
उत्तम त्याग पाप मल धोवे, करता उर में ज्ञान प्रकाश ।।
कर्मों का संवर हो जाता, निज गुण का हो पूर्ण विकाश ।।4।।
किञ्चित् मात्र परिग्रह विरहित, रहे अकिञ्चन के धारी ।।
उत्तम आकिञ्चन के धारी, मुनिवर जानो अविकारी ।
शिवनगरी के स्वामी होते, उत्तम ब्रह्मचर्य धारी ।।
परम ब्रह्म में लीन रहें नित, पद पाते हैं शिवकारी ।।5।।

दश धर्मों के तरू पर चढ़कर, पाते उत्तम फल का स्वाद ।
मुक्ति के पहले मानव का, होवे स्वर्गों में उपपाद ।।
ऐसे परम धर्म की महिमा, गाता है सारा संसार ।
धर्म सरोवर में अवगाहन, करके हो इस भव से पार ।।6।।

दोहा– महिमा सुनकर धर्म की, हृदय जगा अनुराग ।
कर्मों की स्थिति तथा, घटे शीघ्र अनुभाग ।।
पाकर उत्तम धर्म को, करें कर्म का नाश ।
धर्म तरू का नित्य प्रति, होवे शीघ्र विकास ।।7।।

दोहा– धारण कर दश धर्म को, पाएँ शिव सोपान।
कर्म निर्जरा पूर्ण कर, होय शीघ्र निर्वाण।।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि ब्रह्मचर्य पर्यंत–दशलक्षण धर्माङ्गाय पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

दोहा– धर्म कहे दश लक्षणी, अतिशय महिमावान ।
हृदय हमारे वास हो, अत: करें गुणगान ।।

।। इत्याशीर्वादः।।

दश धर्मों की आरती

(तर्ज – इह विधि मंगल....)

दश धर्मों की आरति कीजे, परम धरम धर के सुख लीजे ।
प्रथम आरती क्षमा धरम की, मंगल मय शुभकार परम की ।।1।।
दूजी आरती मार्दव कारी, मद का दमन किए मनहारी ।।2।।
तीजी आरती आर्जव धारी, माया तजने से हो न्यारी ।।3।।
चौथी आरती शौच धरम की, लोभ त्याग जिन धर्म परम की ।।4।।
पाँचवीं आरती सच की कीजे, सत्य वचन हिरदय धर लीजे ।।5।।
छठी आरती संयम की है, इन्द्रिय दमन किए मुनि की है ।।6।।
सातवीं आरती सुतप की जानो, मोक्ष मार्ग का कारण मानो ।।7।।
आठवीं आरती त्याग की गाई, त्याग धर्म जानो सुखदायी ।।8।।
नौवीं आरती आकिञ्चन की, राग त्याग आतम चिन्तन की ।।9।।
दशवीं आरती ब्रह्मचर्य की, ब्रह्म स्वरूप 'विशद' जिनवर की ।।10।।
जो यह आरती मुख से गावे, उभय लोक में वह सुख पावे ।।11।।

प्रशस्ति

भरत क्षेत्र के मध्य है, भारत देश महान।
मध्य प्रदेश का देश में, रहा अलग स्थान।।
जिला छतरपुर में रहा, कुपी लघु सा ग्राम।
लाल भरोसे सेठ का, रहा श्रेष्ठ शुभ नाम।।
उनके अन्तिम पुत्र थे, नाम था नाथूराम।
जिला छतरपुर में गये, वहाँ बनाया धाम।।1।।
जिनके द्वितीय पुत्र थे, जिनका नाम रमेश।
दीक्षा ले जिनने धरा, श्रेष्ठ दिगम्बर भेष।।
विमल सिन्धु गुरुवर हुए, इस जग में विख्यात।
विराग सिन्धु जग में हुए, जैन धर्म में ख्यात।।2।।
दीक्षा गुरु कहलाए वह, किया बड़ा उपकार।
भरत सिन्धु जी ने दिया, जिनको पद आचार्य।।
काव्य कला है श्रेष्ठ शुभ, विशद सिन्धु की खास।
लेखन चिंतन मनन में, जो रखते विश्वास।।3।।
राजस्थान शुभ प्रान्त के, भीलवाड़ा में आन।
दशलक्षण का पूर्ण यह, कीन्हा 'विशद' विधान।।
पच्चिस सौ छत्तीस शुभ, रहा वीर निर्वाण।
भादौं शुक्ला अष्टमी, किया पूर्ण गुणगान।।
जिनने अपनी कलम से, लिखे हैं कई विधान।
सारे भारत देश में, होता है गुणगान।।
काव्य कथा नाटक तथा, लिखते हैं कई लेख।
शास्त्र और पत्रिकाओं में, जिनका है उल्लेख।।5।।
सरल शब्द में श्रेष्ठतम, जिसका किया बखान।
ऐसी अनुपम कृति से, करो सभी गुणगान।।
लघु धी से जो भी लिखा, मानो उसे प्रमाण।
पूजा अर्चा कर 'विशद', पाओ पद निर्वाण।।7।।

प.पू. 108 आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज की पूजन

(स्थापना)

पुण्य उदय से हे ! गुरुवर, दर्शन तेरे मिल पाते हैं।
श्री गुरुवर के दर्शन करके, हृदय कमल खिल जाते हैं॥
गुरु आराध्य हम आराधक, करते उर से अभिवादन।
मम् हृदय कमल में आ तिष्ठो, गुरु करते हैं हम आह्वानन्॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानन्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

सांसारिक भोगों में फँसकर, ये जीवन वृथा गंवाया है।
रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार न पाया है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, निर्मल जल हम लाए हैं।
भव तापों का नाश करो, भव बंध काटने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व.स्वाहा।

क्रोध रूप अग्नि से अब तक, कष्ट बहुत ही पाये हैं।
कष्टों से छुटकारा पाने, गुरु चरणों में आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, चंदन घिसकर लाये हैं।
संसार ताप का नाश करो, भव बंध नशाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय संसार ताप विध्वंशनाय चंदनं निर्व.स्वाहा।

चारों गतियों में अनादि से, बार-बार भटकाये हैं।
अक्षय निधि को भूल रहे थे, उसको पाने आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अक्षय अक्षत लाये हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें, हम गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व.स्वाहा।

काम बाण की महावेदना, सबको बहुत सताती है।
तृष्णा जितनी शांत करें वह, उतनी बढ़ती जाती है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, पुष्प सुगंधित लाये हैं।
काम बाण विध्वंश होय गुरु, पुष्प चढ़ाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

काल अनादि से हे गुरुवर ! क्षुधा से बहुत सताये हैं।
खाये बहु मिष्ठान जरा भी, तृप्त नहीं हो पाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, नैवेद्य सुसुन्दर लाये हैं।
क्षुधा शांत कर दो गुरु भव की ! क्षुधा मेटने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व.स्वाहा।

मोह तिमिर में फंसकर हमने, निज स्वरूप न पहिचाना।
विषय कषायों में रत रहकर, अंत रहा बस पछताना॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, दीप जलाकर लाये हैं।
मोह अंध का नाश करो, मम् दीप जलाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं निर्व.स्वाहा।

अशुभ कर्म ने घेरा हमको, अब तक ऐसा माना था।
पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना था॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, धूप जलाने आये हैं।
आठों कर्म नशाने हेतु, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्व.स्वाहा।

पिस्ता अरु बादाम सुपाड़ी, इत्यादि फल लाये हैं।
पूजन का फल प्राप्त हमें हो, तुमसा बनने आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, भाँति-भाँति फल लाये हैं।
मुक्ति वधु की इच्छा करके, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फलम् निर्व.स्वाहा।

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैं॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

जयमाला

दोहा- विशद सिंधु गुरुवर मेरे, वंदन करूँ त्रिकाल।
मन-वच-तन से गुरु की, करते हैं जयमाल॥

गुरुवर के गुण गाने को, अर्पित है जीवन के क्षण-क्षण।
श्रद्धा सुमन समर्पित हैं, हर्षायें धरती के कण-कण॥
छतरपुर के कुपी नगर में, गूँज उठी शहनाई थी।
श्री नाथूराम के घर में अनुपम, बजने लगी बधाई थी॥
बचपन में चंचल बालक के, शुभादर्श यूँ उमड़ पड़े।
ब्रह्मचर्य व्रत पाने हेतु, अपने घर से निकल पड़े॥
आठ फरवरी सन् छियानवे को, गुरुवर से संयम पाया।
मोक्ष ज्ञान अन्तर में जागा, मन मयूर अति हर्षाया॥
पद आचार्य प्रतिष्ठा का शुभ, दो हजार सन् पाँच रहा।
तेरह फरवरी बसंत पंचमी, बने गुरु आचार्य अहा।।
तुम हो कुंद-कुंद के कुन्दन, सारा जग कुन्दन करते।
निकल पड़े बस इसलिए, भवि जीवों की जड़ता हरते॥
मंद मधुर मुस्कान तुम्हारे, चेहरे पर बिखरी रहती।
तव वाणी अनुपम न्यारी है, करुणा की शुभ धारा बहती है॥
तुममें कोई मोहक मंत्र भरा, या कोई जादू टोना है।
है वेश दिगम्बर मनमोहक अरु, अतिशय रूप सलौना है॥
हैं शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अन्जाना।
हम पूजन स्तुति क्या जाने, बस गुरु भक्ति में रम जाना॥
गुरु तुम्हें छोड़ न जाएँ कहीं, मन में ये फिर-फिरकर आता।
हम रहें चरण की शरण यहीं, मिल जाये इस जग की साता॥
सुख साता को पाकर समता से, सारी ममता का त्याग करें।
श्री देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, मन-वच-तन अनुराग करें॥
गुरु गुण गाएँ गुण को पाने, औ सर्वदोष का नाश करें।
हम विशद ज्ञान को प्राप्त करें, औ सिद्ध शिला पर वास करें॥

ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्ताय पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

गुरु की महिमा अगम है, कौन करे गुणगान।
मंद बुद्धि के बाल हम, कैसे करें बखान॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्ज:- माई री माई मुंडेर पर तेरे बोल रहा कागा.....)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे, आरति मंगल गावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता॥
सत्य अहिंसा महाव्रती की.....2, महिमा कहीं न जाये।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया॥
जग की माया को लखकर के.....2, मन वैराग्य समावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा॥
गुरु की भक्ति करने वाला.....2, उभय लोक सुख पावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे॥
आशीर्वाद हमें दो स्वामी.....2, अनुगामी बन जायें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के... जय...जय॥

रचयिता : श्रीमती इन्दुमती गुप्ता, श्योपुर